पंचम अध्याय

शृंगार का स्वरूप एवं 'पदावली' और 'कीर्तन-घोषा' में चित्रित शृंगार भावना

भारतीय साहित्य में शृंगार की एक लंबी परम्परा रही है। हमारे शोध की आलोच्य कृतियों क्रमशः विद्यापति की 'पदावली' और शंकरदेव की 'कीर्तन-घोषा' में भी शृंगार के अनेक पद मिलते हैं। प्रस्तुत अध्याय में शृंगार का स्वरूप एवं पदावली और कीर्तन-घोषा में चित्रित शृंगार पर प्रकाश डाला गया है।

5.1 शृंगार का स्वरूपः

भारतीय कवियों तथा साहित्यकारों ने शृंगार का चित्रण ख़ूब रमकर किया है। शृंगार को 'रसों का राजा' या 'रसपति' कहा जाता है। जिसका प्रमुख कारण है कि इसके भीतर अधिकांश भाव तथा रस भी संचारी रूप में समाविष्ट हो जाते हैं।

5.1.1 शृंगार की परिभाषाः

शृंगार शब्द की उत्पत्ति दो शब्दों से हुई है- 'श्रृंग' और 'आर' । इसमें 'श्रृंग' का अर्थ है-काम की वृद्धि और 'आर' का अर्थ है-प्राप्ति। अर्थात् कामवासना की वृद्धि एवं प्राप्ति ही शृंगार है और इसका स्थायी भाव रति है। (शृंगार, 2021)

विद्वानों ने शृंगार की परिभाषाएँ समय-समय पर दी हैं; जो इस प्रकार हैं-

आचार्य भरतमुनि ने शृंगार को परिभाषित करते हुए कहा है-

सुख प्रायेष्ट ट्टतु मालयादि सेवकः पुरुष प्रमदायुक्त शृंगार संज्ञिप्त। (शृंगार, 2021)

अर्थात् प्रायः सुख प्रदान करनेवाले इष्ट पदार्थों से सेवित स्त्री और पुरुष से युक्त भाव को शृंगार कहा जाता है। इस प्रकार विशिष्ट इच्छाओं, चेष्टाओं को व्यक्त करनेवाले आत्म गुणों के उत्कर्ष का मूल बुद्धि, सुख, दुख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, संस्कारों का सबसे बड़ा कारण आत्मा का अंहकार विशेष और सहृदयों द्वारा आस्वादित होनेवाला रस शृंगार कहलाता है।

आचार्य भोजराज ने अपने ग्रंथ 'शृंगारप्रकाश' में लिखा है-

शृंगारवीरकरुणाद्रभुतहास्यरौद्र,

बीभत्सवत्सलभयानकंशात्माम्नः।

आम्नासिषुर्दश रसान् सुधियों वयंतु

शृंगारमेव रसनाद्रसमामनाम।। (मिश्र 2014:238)

अर्थात् भोज ने शृंगार को ही सभी में से रस माना है। अन्य तो इसकी सम्पूर्णता की मध्यवर्ती स्थितियाँ हैं।

'साहित्यदर्पण' में आचार्य विश्वनाथ ने तृतीय परिच्छेद में शृंगार के विषय में जो महत्त्वपुर्ण तथ्य दिया है, उसी का अनुवाद कर डॉ. रमन कुमार शर्मा अपने साहित्यदर्पणकोश में इस प्रकार लिखते हैं-

शृंगार एक रस। श्रृंग शब्द का अर्थ होता है काम का अंकुरित हो जाना। गत्यर्थ ऋट से अण् प्रत्यय होकर आर शब्द बनता है। इस प्रकार शृंगार का अर्थ होता है-काम भाव की प्राप्ति। यह शृंगार उत्तम कोटि के युवक व युवतियों का स्वभाव है-श्रृंग हि मन्मथोदभेदस्तदागमनहेतुकः। उत्तमप्रकृतिप्रायो रसः शृंगार इष्यते॥ इसका स्थायीभाव रति है। परंतु मात्र कामावस्था में जिस रति का अनुभव होता है, उसकी परिणति शृंगार नहीं है, क्योंकि वह तो व्यभिचारी भाव है। युवक और युवती की चेतना के स्तर पर एक हो जाने को ही स्थायी भाव कहा जाता सकता है, जब संभोग और वियोग दोनों ही अवस्थाओं में मिलन बना रहता है। इसका वर्ण श्याम है तथा देवता विष्णु। प्रौढ़ा नायिका तथा सर्वथा अनुरागशुन्य वेश्या को छोड़कर शेष नायिकाएँ तथा दक्षिण आदि नायक इसके आलम्बन होते हैं। चंद्र, चंदन,

भ्रमरों का गूंजन आदि इसके उद्दीपन कहे जाते हैं। उग्रता, आलस्य, मरण और जुगुप्सा के अतिरिक्त निर्वेदादि उनतीस भाव इसके व्यभिचारी भाव हैं। भ्रूविक्षेप, कटाक्षादि इसके अनुभाव हैं। यथा-'शून्यं वासगृहं... ' इस पद में नायक और नायिका आलम्बन, शून्य वासगृह उद्दीपन, लज्जा और हास व्यभिचारी भाव तथा चुम्बन अनुभाव है। इनके द्वारा अभिव्यक्त सहृदय विषयक रतिभाव शृंगार रस के रूप को प्राप्त कर रहा है। 3/189-92 (शर्मा 1996:197)

इस प्रकार नायक और नायिका के मन में संस्कार रूप में स्थित रति या प्रेम जब रस की अवस्था को पाकर आस्वादन योग्य हो जाता है, तो वही शृंगार रस कहलाता है।

5.1.2 शृंगार के भेदः

शृंगार के दो भेद किये गये हैं- संयोग और वियोग।

5.1.2.1 संयोग श्रृंगारः

जहाँ पर रति स्थायी, प्रिय के संयोग से परिपुष्ट होकर भिन्न अनुभावों और संचारी भावों द्वारा प्रकट हो, वहाँ संयोग शृंगार होता है। बिहारी सतसई से यह उदाहरण लिया जा सकता है-

बतरस लालस लाल की मुरली धरि लुकाइ।
सौंह करैं भौहँनु हँसै, दैन कहै नटि जाय।। (सिंह 2004:97)

यहाँ नायिका (राधा) कृष्ण के साथ बात करने की लालच के कारण कृष्ण की मुरली छिपा देती है और कृष्ण के पूछने पर मन ही मन हँसती है, पर मुँह से मना कर देती है।

इस पद में स्थायी भाव-रति है, विभाव-आलम्बन-कृष्ण और आश्रय-राधा, उद्दीपन-वतरस लालस है; अनुभाव-बाँसुरी छिपाना, भौंहों से हँसना, मना करना आदि है और संचारी भाव-हर्ष, उत्सुकता, चपलता आदि है।

5.1.2.2 वियोग श्रृंगारः

आचार्य भोजराज ने वियोग शृंगार को परिभाषित करते हुए कहा है-

जहाँ रति नामक भाव प्रकर्ष को प्राप्त करे, लेकिन अभीष्ट को न पा सके, वहाँ विप्रलंभ शृंगार है। (शृंगार, 2019)

आचार्य चिंतामणि का कथन है-

जहाँ मिलै नहिं नारि अरु पुरुष सुवरन वियोग। (शृंगार, 2019/5)

इस प्रकार उपर्युक्त विद्वानों की परिभाषाओं के आधार पर कह सकते हैं कि जहाँ पर रति स्थायी किंतु प्रिय से संयोग न होने पर और भी तीव्र हो, वहाँ वियोग शृंगार होता है। उदाहरणस्वरूप-

ऊधौ मन न भए दस बीस।
एक हुतौ सो गयौ स्याम सँग, को अवराधै ईस।
इंद्री सिथिल भई केसव बिनु, ज्यौ देही बिनु सीस।
आसा लागि रहति तन स्वासा, जीवहिँ कोटि बरीस।
तुम तौ सखा स्याम सुंदर के, सकल जोग के ईस।
सूर हमारै नंद-नंदन बिनु, और नहीं जगदीस।। (वर्मा 2004:299)

यहाँ कृष्ण के विरह में गोपियाँ उद्धव से कहती हैं हमारा मन दस बीस नहीं है। हमारा एक ही मन था वह कृष्ण के साथ चला गया। अब निर्गुण ईश्वर की आराधना कौन करेगा? कृष्ण के बिना इन्द्रियाँ शिथिल हो गई हैं, जैसे बिना सिर के शरीर। आशा से ही शरीर में श्वास आते जाते हैं और आशा से ही सैकड़ौ वर्ष जीवित रहेंगे। तुम (उद्धव) तो कृष्ण के मित्र हो तथा समस्त योग के स्वामी हो। अंत में सूरदास कहते हैं कि कृष्ण के सिवाय अन्य और कोई नहीं है।

इस पद में स्थायी भाव-रति है, विभाव-आलम्बन-कृष्ण, आश्रय-गोपियाँ, उद्दीपन-उद्धव का योग संदेश है; अनुभाव-विषाद है और संचारी भाव-दैन्य, जड़ता, स्मृति आदि हैं।

वियोग श्रंगार की चार स्थितियाँ और दस दशाएँ होती हैं। वियोग की चार स्थितियाँ- पूर्वानुराग, मान, प्रवास और करुण हैं।

मिलन से पूर्व हृदय में अनुराग का आविर्भाव होता है, जैसे प्रत्यक्ष, श्रवण, चित्र, स्वप्नदर्शन आदि ही पूर्वानुराग है। आशा के प्रतिकूल अपराधजनित प्रणयकोप को मान कहते हैं। यह लघु, मध्यम और गुरु तीन प्रकार का होता है। प्रिय में से एक के परदेस गमन के समय जो प्रेम की दुःखमयी स्थिति होती है, वह प्रवास कहलाता है। प्रेमी तथा प्रेमिका में से किसी एक की मृत्यु होने पर दूसरे का दुःख ही करूण है।

वियोग की दस दशाएँ हैं- अभिलाषा, चिंता, स्मरण, गुणकथन, उद्वेग, उन्माद, प्रलाप, व्याधि, जड़ता और मरण।

प्रिय से मिलने की इच्छा आभिलाषा है। प्रिय के प्राप्ति के उपायों की खोज की स्थिति चिंता है। सुख प्रदान करनेवाली वस्तुएँ जब दुःख प्रदान करने की स्थिति उद्वेग है। जड़ अथवा चेतन में अंतर न कर पाने की स्थिति को उन्माद कहा जाता है। मन की व्याकुलता के कारण अटपटी वार्तालाप करने की स्थिति को प्रलाप कहते हैं। व्याधि है शरीर की दुर्बलता, दीर्घ निःश्वास, पाण्डुता आदि। शरीर और मन की चेष्टा शून्य होने की स्थिति को जड़ता कहते हैं। प्राण त्याग ही मरण है।

5.2. पदावली और कीर्तन-घोषा में चित्रित शृंगार भावनाः

5.2.1. पदावली में चित्रित शृंगार भावनाः

महाकवि विद्यापति भारतीय काव्यशास्त्र के निष्णात पण्डित थे। रससिद्ध कवि विद्यापति ने अपनी अमर कृति पदावली में शृंगार के सभी पक्षों का सुंदर चित्रण प्रस्तुत किया है। विद्यापति को भक्त मानने के विपरीत अधिकतर विद्वानों ने श्रृंगारी माना है। उन विद्वानों के मतों को हम इस प्रकार देख सकते हैं:

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार-

विद्यापति के अधिकतर पद शृंगार के ही हैं, जिनमें नायिका और नायक राधा-कृष्ण हैं। इन पदों की रचना जयदेव के गीतिकाव्य के अनुकरण पर ही शायद की गई है। इनका माधुर्य अदभूत है। उन्होंने इन पदों की रचना शृंगार काव्य की दृष्टि से की है, भक्त के रूप से नहीं। विद्यापति को कृष्णभक्तों की परंपरा में न समझना चाहिए। आध्यात्मिक रंग के चश्मे आजकल बहुत सस्ते हो गये हैं। उन्हें चढ़ाकर जैसे कुछ लोगों ने गीतगोविंद के पदों को आध्यात्मिक संकेत बताया है, वैसे ही विद्यापति के इन पदों को भी। (शुक्ल 2004:33)

डॉ. रामकुमार वर्मा के शब्दों में-

राधा का प्रेम भौतिक और वासनामय प्रेम है। आनंद ही उसका उद्देश्य है और सौंदर्य ही उसका कार्य-कलाप। विद्यापति के इस बाह्य संसार में भगवत-भजन कहाँ, इस में वयःसंधि कहाँ, सद्यस्नाता में ईश्वर से संधि कहाँ। उनकी कविता विलास की सामग्री है, उपासना की साधना नहीं। उससे हृदय मतवाला हो सकता है, शांत नहीं। (दीक्षित:60)

डॉ. बाबुराम सक्सेना विद्यापति के पदों के अध्ययन कर विद्यापति को बड़े श्रृंगारी कवि कहा है। इन पदों को राधा कृष्ण की भक्ति पर आरोपित करना पद-पदार्थ के प्रति अन्याय है। (दीक्षित:61)

डॉ. आनंदप्रकाश दीक्षित भी विद्यापति को श्रृंगारी ही मानते हैं। उनका कथन है-

न वे भक्त थे, न उसके पुरस्कार स्वरूप उन्हें वैसी उपाधियाँ मिलीं और न ही उनका वे प्रयोग कर पाए। विद्यापति तो वास्तव में रससिद्ध कवि थे। इसलिए जिस भाव की कविता में जब जिस कारण से भी उनका मन रमा उन्होंने उस भाव की कविता तभी लिख डाली और अपने सिद्धत्व से उसे चरमोत्कर्ष पर पहुँचा दिया। विद्यापति की कविता में न तो रहस्यवाद है, न वैराग्य, न भक्ति बल्कि रहस्याभास, वैराग्यभास और भक्त्याभास है। वास्तव में विद्यापति मूलतः एक श्रृंगारी कवि हैं। (दीक्षित:61/62)

इस प्रकार उल्लेखित मतों के अनुसार इन विद्वानों ने विद्यापति को श्रृंगारी कवि ही कहा है, भक्त कवि नहीं। राजकवि तथा राजसभासद होने के नाते समकालीन विलासिता पूर्ण और श्रृंगारिक माहौल का प्रभाव तो विद्यापति पर पड़ा ही था। साथ ही अपने पूर्ववर्ती कवियों विशेषकर महाकवि जयदेव के गीत-गोविंद के शृंगार भावना से प्रेरित होकर विद्यापति ने पदावली में शृंगार का भव्य चित्रण किया है। विद्यापति ने शृंगार के उभय पक्षों का चित्रण पदावली में कुशलतापूर्वक करके उसे अमरता प्रदान की है। पदावली में संयोग शृंगार का जो आनंद, उल्लास, प्रिय मिलन की उत्सुकता और वियोग शृंगार की भिन्न अवस्थाओं का सरल एवं स्वाभाविक चित्रण मिलता है, उसका विवेचन निम्नलिखित रूप में किया गया है।

5.2.1.1 पदावली में चित्रित संयोग श्रृंगारः

शृंगार के अमर गायक कहे जानेवाले महाकवि विद्यापति ने पदावली में संयोग शृंगार का वर्णन रमकर किया है। संयोग की भिन्न अवस्थाओं का रम्य चित्रण विद्यापति ने अपनी सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति और मौलिक काव्य प्रतिभा के बल पर खुलकर किया है। विद्यापति की पदावली राधा-कृष्ण के प्रेम-प्रसंगों का अक्षय भण्डार है। पदावली में चित्रित संयोग शृंगार का एक अनुपम चित्र देखिए, जहाँ प्रेमी कृष्ण मुरली बजाकर अपनी प्रेमिका राधा से मिलने की प्रतीक्षा में व्याकुल हो रहे हैं-

नंदक नंदन कदम्बेरि तरु-तर, धिरे धिरे मुरलि बोलाब।
समय सँकेत-निकेतन बइसल, बेरि-बेरि बोलि पठाब।।
सामरि, तोरा लागि, अनुखन बिकल मुरारि।। (बेनीपुरी 2011:35)

यहाँ नंद के पुत्र कृष्ण यमुना के किनारे कदम्ब के वृक्ष पर बैठकर प्रेमिका राधा की राह देख रहे हैं। पहले ही निश्चित समय संकेत-स्थल पर राधा को न आता देख कृष्ण व्याकुल हो रहे हैं।

पदावली में चित्रित संयोग का एक अनूठा चित्र देखिए, जहाँ वयःसंधि प्राप्त एक अज्ञातयौवना के मन में शृंगार का प्रथम समागम होता है-

सैसव जौवन दुहु मिलि गेल, स्रवनक पथ दुहु लोचन लेल।।

वचनक चातुरि लहु-लहु हास, धरनिये चाँद कएल परगास।।

मुकुर हाथ लए करए सिंगार, सखि पूछइ कइसे सुरत-बिहार।।

निरजन उरज हेरइ कत बेरि, बिहँसइ अपन पयोधर हेरि।। (बेनीपुरी 2011:36/37)

यहाँ नायिका के शरीर में शैशव और यौवन का परस्पर मिलन हो गया है, जिसके कारण वयःसंधि प्राप्त अज्ञातयौवना के मन और शरीर दोनों का परिवर्तन हो रहा है। यौवन के आने से उसके दोनों नेत्र कानों की ओर जाने लगे हैं अर्थात् वह कटाक्ष करने लगी है। बचपन की सहजता के स्थान पर अब उसकी वाणी में चातुर्य आने लगी है। यौवनागम के प्रवेश के कारण ही उसकी मंद मधुर मुस्कान उसे और अधिक रमणीय करती है। जैसे चंद्रमा धरती पर अपनी आभा छिटक रही है। दर्पण के सम्मुख अब वह शृंगार करने लगी है तथा सखियों से रति विषयक बातों की जानकारी लेना प्रारम्भ कर दी है। निर्जनता में जाकर नायिका अपने स्तनों का बार-बार अवलोकन कर उसे वर्धमान देख हँसने लगती है।

पूर्णयौवना सद्यस्नाता का चित्रण पदावली में चित्रित संयोग वर्णन की अन्यतम चित्रों में से एक है-

कामिनि करए सनाने, हेरतहि हृदय हनए पंचबाने।।

चिकुर गरए जलधारा, जनि मुख-ससि डरें रोअए अँधारा।।

कुच-जुग चारु चकेवा, निअ कुल मिलत आनि कोने देवा।।

ते संकाएँ भुज पासे, बाँधि धएल उड़ि जाएत अकासे।।

तितल वसन् तनु लागु, मुनिहुक मानस मनमथ जागू।।

सुकवि विद्यापति गावे, गुनमति धनि पुनमत जन पावे।। (बेनीपुरी 2011:46/47)

यहाँ कामिनी नायिका स्नान करती है, जिसे देखते ही देखनेवाले के हृदय पर कामदेव पंच वाणों से प्रहार करते हैं। नायिका की केशों से जल की धारा गिर रही है, जिसे देख ऐसा प्रतीत होता है मानो मुखरूपी

चंद्रमा के डर से केश रूपी अंधकार रो रहा है। उसके दोनों कुच चारु चक्रवाक की भाँति है, यदि वे कुच रूपी चक्रवाक उड़कर अपने कुल में जा मिले तो, उनका मिलना मुश्किल होगा। इसी कारण कामिनी अपनी स्तनों को दोनों भुजा रूपी पाश से जकड़ लेती है। उसके वस्त्र भींगे है, इसलिए उसके तन से चिपके हुए है। ऐसी स्थिति में उसके प्रत्येक शरीर के अंग दिखाई पड़ रहे हैं। सुंदरी नायिका के इस विवृत सौंदर्य को देख मुनियों के मन में भी काम भावना जाग्रत हो सकती है, साधारण मनुष्य की तो बात ही क्या? अतः विद्यापति कहते हैं कि ऐसी गुणवती सुंदरी को पाने का योग्य कोई पुण्यवान ही होगा।

संयोग में प्रेम और रति भाव का चित्रण अन्यतम महत्त्व रखता है। पदावली में कवि ने राधा-कृष्ण के प्रेम सम्बंध में रति या विलास का भी अदभूत चित्रण किया है। स्त्री-पुरुष के मिलन का मन, हित, चिंतन, छेड़छाड़, मान, संभोग, कामकातरता, सौंदर्यलिप्सा आदि भावों का चित्रण विद्यापति ने स्वतंत्र रूप में किया। पदावली में राधा और कृष्ण दोनों परस्पर के रूप सौंदर्य से आकर्षित हैं, परस्पर से प्रेम करते हैं, परस्पर से मिलने को आतुर हैं। पदावली में मिलन और उद्दाम विलास का भी चित्रण है। रति रस के मर्मज्ञ कवि विद्यापति ने राधा-कृष्ण के मिलन के अत्यंत सौंदर्यपूर्ण चित्र बहुत बार खींचा है। एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है-

सखी परबोधि सयन-तल आनि।
पिय हिय-हरषि धएल निज पानि।।
छुबइत बालि मलिन भइ गेलि।
बिधुकर मलिन कमलिनी भेलि।। (बेनीपुरी 2011:75)

इस पद में सखियाँ राधा को बहुत समझा-बुझाकर शय्या के पास लाकर चली जाती हैं। कृष्ण से सम्पर्क होने पर उसके कर स्पर्श से ही राधा मानो कलाहीन हो गई, जैसे चंद्रमा की किरणों में कामिनी की शोभा फीकी हो जाती है। राधा की लज्जा और डर का चित्रण कर काम क्रीड़ा की स्वाभाविक रीति का वर्णन कवि ने यहाँ किया है।

पदावली में दूती की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। नायक और नायिका को मिलाने का कार्य कवि ने दूती के द्वारा किया है, यह पदावली में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। दूती द्वारा कृष्ण को प्रथम समागम की शिक्षा देने का चित्रण इस पद में द्रष्टव्य है-'प्रथम समागम भूखल अनंग। धनि बल जानि करब रतिरंग' (बेनीपुरी 2011:71)। यहाँ विदग्ध दूती द्वारा कृष्ण को रति क्रीड़ा की शिक्षा दी गई है। प्रथम समागम की उत्सुकता में आतुरता से काम न लें, क्योंकि नायिका कोमलांगी है। अतः कवि इस पद से यही संदेश देते हैं कि कोमलांगी नारी के साथ पुरुष को कोमलता का ही व्यवहार करना चाहिए।

इस प्रकार संयोग शृंगार की ऐसे अनेक हृदयस्पर्शी पद हैं, जिसका चित्रण विद्यापति ने अपनी पदावली में किया है।

5.2.1.1.1. सौंदर्य चित्रणः

पदावली में कवि विद्यापति ने नायक और नायिका के अप्रतिम सौंदर्य का वर्णन किया है। पदावली में चित्रित शृंगार की अन्यतम विशेषता रही है-सौंदर्य चित्रण। जिसके अंतर्गत नख-शिख चित्रण, नायक-नायिका भेद, वयःसंधि, यौवन, सद्यस्नाता, प्रेम, सखी-शिक्षा, नोक-झोंक, मिलन, अभिसार, रति-क्रीड़ा आदि सभी विषयों के पद विद्यमान हैं।

सौंदर्य शब्द की उत्पत्ति 'सु' उपसर्ग के साथ 'उंद' धातु में 'अरन' प्रत्यय लगने से हुई है, जिसका अर्थ है सुंदर। संस्कृत में कहा गया है-सुंद राति इति सुंदरम तस्य भाव सौंदर्य। अर्थात् सुंद को जो लाता है वह सुंदर और उसका भाव जहाँ हो तो वह सौंदर्य कहलाता है। (सौंदर्य, 2020)

प्रेम के कवि विद्यापति ने पदावली में सौंदर्य और यौवन दोनों के गीत गाया है। विद्यापति ने अपनी अक्षय कृति पदावली में प्रेम-प्रसंग के वर्णन के लिए मूल आलम्बन के रूप में राधा और कृष्ण को नायक-

नायिका चुना। कवि विद्यापति ने नायक कृष्ण को 'अपरूप' कहकर उनके रूप सौंदर्य का वर्णन गहराई में जाकर रेखांकित करने का प्रयास किया है-

ए सखि पेखलि एक अपरुप। सुनइत मानव सपन-सरूप। (बेनीपुरी 2011:54)

इसी प्रकार विद्यापति ने राधा को भी 'अपरूप', 'अभिरामा' आदि से अभिहित किया है। राधा के रूप का चित्रण कवि ने विशेष रूप में किया है। सौंदर्यांकन में अपने आप को असमर्थ कहना ही एक प्रकार से सौंदर्य की अपुर्वता को स्वीकारना होता है। विद्यापति ने भी राधा के सौंदर्यांकन में स्वयं को असमर्थ कहते हुए अपने भावों की अभिव्यक्ति इस प्रकार दी है-

कि आरे। नव यौवन अभिरामा।

जत देखल तत कहए न पारिअ, छओ अनुपम एक ठामा।। (बेनीपुरी 2011:40)

इसी प्रकार एक अन्य पद में भी कवि राधा के बारे में वर्णन करते हैं-'कि कहब सुंदरि रूपे' (बेनीपुरी 2011:41)।

सौंदर्यानुभूति मूलतः दो प्रकार की होती है-एक आंतरिक या मानसिक दूसरा बाह्यिक या शारीरिक। विद्यापति के सौंदर्य चित्रण की सबसे बड़ी विशेषता है कि उन्होंने पदावली में आंतरिक और बाह्यिक दोनों स्थितियों का चित्रण सूक्ष्मातिसूक्ष्म दृष्टिकोण से किया है। क्योंकि विद्यापति शरीर विज्ञान के साथ-साथ मनोविज्ञान के भी अच्छे ज्ञाता थे। इन्होंने शरीर विज्ञान के आधार पर मनोवैज्ञानिक क्रम से पदावली में रूप सौंदर्य का चित्रण प्रस्तुत किया है।

पदावली में सर्वप्रथम वयःसंधि प्राप्त होती हुई एक अज्ञात यौवना की मनःस्थिति को बाह्य चित्र से अंकित कर कवि ने अपनी सुक्ष्म-निरीक्षण क्षमता का ही परिचय दिया है। 'सैसव जौवन दरसन् भेल, दुहु दल

बलहि दंद परि गेल' (बेनीपुरी 2011:37) पद में अज्ञात यौवना सुंदरी के मनोभावों का अद्वितीय चित्रण कवि ने किया है।

नारी सौंदर्य के आकर्षण का केंद्र उसके उरोज होते हैं। मनोविज्ञान के अनुसार यही सत्य है कि नारी के रूप-स्वरूप को देखनेवाले की प्रथम दृष्टि उसके उन्नत उरोजों पर ही जाती है। कवि विद्यापति ने भी पदावली में नारी के सौंदर्य चित्रण में उरोजों की सर्वाधिक चर्चा की है। एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है-

पीन पयोधर दुबरि गता, मेरु उपजल कनक लता।।

ए कान्ह चोरि दोहाई, अति अपरूप देखलि राई।।

मुख मनोहर अधर रँगे, फुललि माधुरी कमलक संगे।।

लोचन जुगल भृंग अकारे, मधुक मातल उड़ए न पारे।। (बेनीपुरी 2011:39)

प्रस्तुत पद में मुख्य बात यह द्रष्टव्य है कि कवि ने सुंदरी नायिका के सौंदर्य के आकर्षणीय अंगों में सर्वप्रथम पयोधर अर्थात् पुष्ट स्तनों की चर्चा की है। बाद में मनोहर मुख, अधर, नेत्र आदि की। सुंदरी नायिका शरीर से तो दुबली पतली है किंतु उसके स्तन स्थूल, पुष्ट एवं भारी है। उसके शरीर में स्तन इस प्रकार सुशोभित हो रहे हैं, जैसे स्वर्णलता से सुमेरु पर्वत का उदय हुआ हो। इस प्रकार मनोविज्ञान के आधार पर रूप सौंदर्य का चित्रण करने के कारण विद्यापति का भावपक्ष और अधिक प्रभावपूर्ण बना।

बाह्यिक या शारीरिक रूप चित्रण में नख-शिख, वेश-भूषा, आकृति-प्रकृति, सुकुमारता आदि की चर्चा होती है। पदावली में कवि विद्यापति ने नख-शिख वर्णन में जो लेखनी चलाई है, वह चमत्कारपूर्ण है। साथ ही और एक बात अध्ययन के दौरान जानने को मिलता है कि कवि ने नख-शिख वर्णन के साथ शिख-नख का भी वर्णन किया है।

डॉ. आनंद प्रकाश दीक्षित के अनुसार–

नख-शिख का संबंध अलौकिक आलम्बनों से होता है और शिख-नख का लौकिक से। विद्यापति ने क्योंकि कुछ अलौकिकता भी रखी है, अतः उनका नख-शिख वर्णन भी प्रशंसनीय है और शिख-नख वर्णन भी। विद्यापति की नख-शिख वर्णन की विशेषता बिम्ब प्रस्तुत करने में है। उनका नख-शिख वर्णन सामान्य रहा है, कहीं अलंकृत किंतु अलंकृत वर्णनों में उनका मन बहुत रमा है, जिससे बड़े चमत्कारपूर्ण बिम्ब उभरे है। (दीक्षित:65)

कवि विद्यापति ने नायक कृष्ण के नख-शिख का अद्भुत चित्रण किया है। कृष्ण का सौंदर्य पुरुष का सौंदर्य है। एक पद यहाँ प्रस्तुत है, जिसमें रूप-सौंदर्य का आंतरिक और बाह्यिक दोनों का समन्वय हो गया है-

अवनत आनन कए हमे रहलिहु, बारल लोचन चोर।
पिआ मुख-रुचि पिबए धाओल, जइसे चाँद चकोर।।
ततहु सँय हठे हरि मोञे आनल, धएल चरन राखि।
मधुप मातल उड़ए न पार, तैओ पसारए पाँखि।। (बेनीपुरी 2011:55)

प्रस्तुत पद में सुंदरी राधा का कृष्ण से आकस्मिक भेंट होने पर उनके रूप सौंदर्य से प्रभावित होने पर उसकी क्या दशा हुई जिसका वर्णन वह अंतरगिनी सखी से करती है। नायक कृष्ण से साक्षात्कार होते ही राधा अवनतमुखी हो गई। रूप की चोरी करनेवाले अपने नेत्रों को राधा ने रोकने का प्रयास किया, किंतु वे प्रिय मुख सौंदर्य पान करने के लिए दौड़ पड़े। जैसे चकोर चाँद को देखकर दौड़ता है। राधा बलपूर्वक नेत्रों को वहाँ से हटाकर कृष्ण के चरणों के पास ले आई और वहीं स्थिर कर दिया। परंतु जिस प्रकार मधुपान कर प्रमत्त बना भ्रमर उड़ नहीं सकता किंतु उड़ने की चेष्टा में पंख पसार देता है, उसी प्रकार नेत्र बार-बार कृष्ण के मुख को ही निहारने लगे। संयोग शृंगार का अत्यंत हृदयग्राही चित्रण प्रस्तुत पद में देखने को मिलता है।

पदावली में चित्रित राधा के नख-शिख वर्णन का एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है-

पल्लवराज चरन-युग सोभित, गति गजराजक भाने।

कनक-कदलि पर सिंह समारल, तापर मेरु समाने।।

मेरु उपर दुइ कमल फुलाइल, नाल बिना रुचि पाई।

मनि-मय हार धार बहु सुरसरि, तें नहि कमल सुखाई।।

अधर बिम्ब सन्,दसन् दाड़िम-बिजु, रवि ससि उदथिक पासे।

राहु दूर बसु निअरे न आबथि, तें नहि करथि गरासे।।

सारंग नयन बयन पुनि सारँग सारँग तसु समधाने।

सारंग उपर उगल दस सारंग, केलि करथि मधु पाने।। (बेनीपुरी 2011:41)

प्रस्तुत पद में नायिका राधा के अदभूत सौंदर्य का नख-शिख चित्रण किया है। कवि ने राधा के विविध शरीरावयवों, जैसे-चरण, गति, जंघाओं, कटि, वक्षःस्थल, कुच, हार, अधर, दसन्, नेत्र, वचन तथा केश आदि के हेतु क्रमानुसार कमल, ऐरावत, कदली, सिंह, सुमेरु, गिरि, गंगा, बिम्बाफल, दाड़िम बीज, राहु, हिरण, कोकिल, चंद्रमा एवं भ्रमर के उपमानों से चित्रण कर सौंदर्य की मनोरम झाँकी प्रस्तुत की है।

पदावली में नायिका के अंग-प्रत्यंगों के रूप सौंदर्य चित्रण में उपमानों का जो विधान कवि ने किया है, उसमें उनकी विलक्षणता का परिचय मिलता है। नवीन एवं मौलिक उपमानों के प्रयोग के साथ कवि ने पुराने एवं शास्त्रीय उपमानों का भी प्रयोग नवीन रूप में किया है। एक पद यहाँ उल्लेख्य है-

हरिन इंदु अरबिंदु करिनि हिम, पिक बूझल अनुमानी।

नयन बदन परिमल गति तन रुचि, अओ अति सुललित बानी।।

कुच जुग उपर चिकुर फुजि पसरल, ता अरुझाएल हारा।

जनि सुमेरु ऊपर मिलि ऊगल, चाँद बिहुनि सबे तारा।।

लोल कपोल ललित मनि-कुंडल, अधर बिंब अध जाई।

भौंह भमर, नासापुर सुंदर, से देखि कीर लजाई।। (बेनीपुरी 2011:40)

प्रस्तुत पद में नायिका राधा के रूप वर्णन में उसके अंग-प्रत्यंगों के उपमान हैं- चंद्रमा, हिरण, कमल, हथिनी, सोना, कोकिल, चकोर, बिंबफल, कीर, सुमेरु पर्वत। सृष्टिकर्ता के सर्वोत्तम पदार्थ ही राधा के सौंदर्य के उपमा बने हैं। सौंदर्य चित्रण में कवि विद्यापति इतने सिद्धहस्त थे कि एक मादकता-सी पाठकों के मन में उद्भव होती है। इसलिए कवि निराला ने पदावली की मादकता को नागिन की लहर कहा है।

पदावली में चित्रित सौंदर्य की और एक विशेषता रही है कि रूप के प्रतिमान स्वयं लज्जित होकर कहीं छिप जाते हैं। 'कबरी भय चामरी गिरि कंदर, मुख भय चाँद अकासे' (बेनीपुरी 2011:45) पद में नायिका की सखी उसके सौंदर्य का वर्णन उसी से करती हैं। नायिका राधा के सौंदर्य से सभी डर कर प्रभावित हो गए हैं। केशराशि के डर से चँवर वाली गाय, मुख छवि के डर से चंद्रमा, आँखों से मृग, सुरीली वाणी से कोयल, कुच कोरों की सुषमा से कमल की कलियाँ, दंत-पंक्तियों की छवि देख अनार, शरीर की गौरापन को देख शिव का विषपान, भूजाओं से कमलनाल, हथेलियों की सुकोमलता से नवोत्पन्न पत्ते ये सभी भयभीत हो गए हैं। अर्थात् कवि ने राधा के रूप का अंकन इस प्रकार किया है कि सभी उपमान स्वयं फीके पड़ गये हैं।

सद्यस्नाता नायिका के सौंदर्य का जो चित्र कवि ने प्रस्तुत किया है, वह अनूठा है। नायिका की सुंदरता पद में चित्रित देखनेवाले ही नहीं बल्कि पाठकों के हृदय को भी हरनेवाली है। स्नानोपरांत ऐसी सुंदरी सद्यस्नाता नायिका का वर्णन विद्यापति द्वारा ही सम्भव है- 'कामिनि करए सनाने। हेरतहि हृदय हनए पंचबाने' (बेनीपुरी 201146)। विद्यापति की राधा अनुपम सुंदरी है। उसके खंजन रूपी नेत्र, कटाक्ष, उरोज, त्रिबली नाभि, नितंब सभी सौंदर्य के रस से भरे हुए हैं। उसकी चपलता, चेष्टा सभी सुखद, आकर्षक, सप्राण और प्रभावशाली हैं। संयोग में हाव-भाव चित्रण का अन्यतम योग रहता है। पदावली में विद्यापति में अनेक स्थल पर राधा के मनोमुग्धकारी हाव-भाव का चित्रण किया है। पदावली में चित्रित राधा के मनोमुग्धकारी लुभावनी चेष्टा का एक चित्र यहाँ प्रस्तुत है-

अंबर बिघटु अकामिक कामिनि, कर कुच झापुँ सुछंदा।

कनक-संभु जनि अनुपम सुंदर, दुह पंकज दस-चंदा।।

कत रूप कहब बुझाई।

मन मोर चंचल लोचन विकल भेल, ओतहि अनाइत आई।।

आड़ बदन कए मधुर हास दए, सुंदरि रहु सिर नाई। (बेनीपुरी 2011:50)

प्रस्तुत पद में अचानक अंचल हट जाने पर नायिका तुरंत अपने हाथों से उरोजों को ढक लेती है। यह दृश्य ऐसा प्रतीत होता है जैसे सोने के महादेव पर दो कमल (हाथ) और दस चाँद (अंगुलियों के नाखुन) हो। कनखियों से लाज भरे भाव से देखती हुई तनिक मुस्कराकर वह अपना मस्तक नीचे कर लेती है। प्रस्तुत पद में नायिका की लज्जा, हाव-भाव और नारी सुलभ चेष्टाओं का जो मनोहारी चित्रण देखने को मिलता है वह अद्वितीय है।

महाकवि विद्यापति ने पदावली में पहले तो सौंदर्य का व्यापक फलक पर चित्रण किया और फिर तटस्थ भाव के साथ हृदय पर पड़नेवाले प्रभाव का भी चित्रण किया। उदाहरणस्वरूप-

रामा, अधिक चंगिम भेल।

कतन जतन कत अद्‌भूत, बिहि निधि तोहि देलि।।

सुंदर बदन सिंदुर-बिंदु सामर चिकुर भार।

जानि रवि-ससि संगहि ऊगल पाछ्रु कए अंधकार।।

चंचल लोचन बाकँ निकारए अंजन शोभा पाए।

जनि इंदीवर पवन-पेलल अलि भरे उलटाए।। (बेनीपुरी 2011:41)

प्रस्तुत पद में नायिका राधा के सौंदर्य का अंकन करते हुए कवि कहते हैं कि यौवन के आगमन से उसकी सुंदरता और भी अधिक शोभायमान हो गई है। पूर्ण रूप से प्रयास करते हुए विधाता ने चुन-चुनकर सभी वस्तुओं को तुमको दे दिया है। चंद्रमा-सा सुंदर मुख, उस पर लगा हुआ लाल सिंदूर का टीका और काले

श्यामल बालों की बेणी, इन तीनों के समागम से मानो ऐसा प्रतीत होता है कि अंधकार को पीछे हटाकर सूर्य और चंद्रमा एक साथ उदय हो रहा है। यहाँ कवि ने अपनी अद्वितीय कल्पनाशक्ति और रहस्यमयता के द्वारा असंगत को भी संगत बना दिया है। अंजनयुक्त चंचल नेत्रों से जब वह सुंदरी निहारती है, तो जैसे भँवरो के भार से झुका कमल पुष्प पवन द्वारा आंदोलित होने पर उल्टा हो गया हो। इस प्रकार प्रस्तुत पद में सौंदर्य का जो अंकन कवि ने किया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है।

इस प्रकार सौंदर्य के चितेरे कवि विद्यापति ने पदावली में सौंदर्य के दोनों रूपों आंतरिक और बाह्यिक का अत्यंत मनोमुग्धकारी तथा सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूप से चित्रण किया है। नवीन एवं मौलिक उदभावना शक्ति द्वारा विद्यापति ने सभी दृष्टियों से पदावली में सौंदर्य चित्रण कर संयोग शृंगार का अद्वितीय चित्रण किया है।

महाकवि विद्यापति ने काव्य शास्त्रीय परंपरा के आधार पर ही पदावली में नायक-नायिका का चित्रण किया है। शृंगार रस वर्णन में नायक-नायिका भेद एक अन्यतम अंग होता है। नायक-नायिका भेद सम्बंधी धारणा का निर्माण रीतिकाल में ही हुआ। साहित्य में शृंगार का आलम्बन रूप-यौवन सम्पन्न जो पुरुष या स्त्री होती है, जिसका चरित्र काव्य अथवा नाटक का मुख्य विषय हो उसे ही नायक और नायिका कहते हैं। काव्य शास्त्रीय परम्परा और आचार्यों द्वारा निर्मित नायक और नायिका के अलग-अलग भेद हैं। पदावली में चित्रित अधिकतर श्रृंगारिक पदों में परस्पर आलम्बन कृष्ण और राधा ही हैं। पदावली में शृंगार का आलम्बन नायक कृष्ण है। विद्यापति ने कृष्ण के रूप का अनोखा चित्रण किया है, जो अपूर्व है तथा स्वप्न जैसा है। राधा तथा गोपियाँ जिसे देखकर बेहोश हो जाती हैं और कृष्ण के प्रेम को पाने के लिए बिह्वल हो जाती हैं-

> ए सखि पेखलि एक अपरुप। सुनइत मानब सपन-सरूप।।
>
> कमल जुगल पर चाँदक माला। तापर उपजल तरुन तमाला।। (बेनीपुरी 2011:54)

यहाँ कृष्ण साधारण मानव रूप में चित्रित होने पर भी उनमें दिव्यता का समन्वय हुआ है।

इसके अतिरिक्त कवि विद्यापति ने कृष्ण को धीरललित, चतुर, शठ, धृष्ठ, उपपति और मानी नायक के रूप में चित्रित किया है। पदावली में कृष्ण कोमल स्वभाव, नृत्य गीत निपुण, कामिनी प्रेमी और सुषमा सम्पन्न हैं, जो धीरललित नायक के अंतर्गत आते हैं। पदावली में चित्रित कृष्ण अति चतुर हैं। चतुर नागर के रूप में कृष्ण को अनेक स्थलों पर चित्रण किया गया है। एक पद में देखिए-

बड़ रे चतुर मोर कान। साधन बिनहि भाँगल मोर मान।।
जोगी बेष धरि आओल आज। के इह समुझय अपरुब काज।।
सासु बचनें हमे भीख आनि देल। मोर मुख हेरइते गदगद भेल।।
कह तब- 'मान-रतन देह मोय'। समुधल तब हमे सुकपट सोय।।
जे किछु कयल तब कहइते लाज। केओ नहि जानल नागर-राज।।
विद्यापति कह सुंदरि राई, किए तोहें समुझबि से चतुराई।। (बेनीपुरी 2011:115)

यहाँ कृष्ण कपट-वेश में राधा से मिलते हैं। राधा इसी विषय में सखी से कहती है कि- कान्हा बड़े चतुर हैं। बिना किसी साधन के ही आज मेरा (राधा का) मान भंग कर दिया। आज माधव योगी वेष धारण कर हमारे द्वार पर आ गए। सास के आज्ञानुसार जब मैं भिक्षा ले गई तो मेरा मुख देखते ही वे प्रसन्न हो उठे। तत्पश्चात योगीरूपी कृष्ण ने मान रूपी रत्न प्रदान करने को कहा। तब जो कुछ राधा को कहना था, शिकायत थी, तब लज्जावश वह कह न सकी। वेश परिवर्तन करने के कारण रसिक कृष्ण को किसी ने पहचाना भी नहीं। अंत में कवि कहते हैं कि माधव की चतुराई कैसे कहूँ, उनकी चतुराई कौन समझ सकता है?

इस प्रकार चतुर कृष्ण एक बार परकीया बाला के साथ उसकी अनुरक्तता जानकर रात को उससे अभिसार के लिए गमन करते हैं। रात सभी के निद्रा में विभोर होने पर कान्हा परकीया बाला के साथ प्रेम व्यापार करने को आते हैं- 'गुरुजन घरहि नींदे भेल भोर। सेज तेजल उठि नंद-किशोर।।' (बेनीपुरी 2011:95)। ऐसी रीति तो उपपति नायक ही करते हैं। पदावली के कृष्ण में शठ नायक के लक्षण भी द्रष्टव्य

हैं। जो नायक एक नायिका के रहते हुए भी अन्य किसी के साथ सम्पर्क रखता हो और उसे गुप्त रखता हो वही शठ नायक कहलाता है। पदावली का एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है-

कुंकुमे लओलह नख-खत गोइ। अधरक काजर अएलह धोइ।।

तइओ न छपल कपट-बुधि तोरि। लोचन अरुन बेकत भल चोरि।।

चल चल कान्ह बोलह जनु आन। परखत चाहि अधिक अनुमान।।

जानओं प्रकृति बुझओं गुणशीला। जत तोर मनोरथ मनसिज-लीला।। (बेनीपुरी 2011:103)

यहाँ नायक कृष्ण राधा के होते हुए भी किसी अन्य स्त्री के साथ रात व्यतीत कर आए हैं। तब राधा कृष्ण की चोरी को पकड़ती हुई कह रही है-हे माधव, उस स्त्री ने अपने नखों से बकोटकर जो चिह्न तुम्हारे वक्षस्थल पर बना दिया था, उसे तुम अंगराग लगाकर छिपा लाए हो। तथा उस स्त्री के चुम्बन करने से जो काजल तुम्हारे अधरों पर लग गया था, उसे धो आए हो। परंतु हे माधव इतना करने पर भी तुम्हारा छल-कपट छिप न सका। तुम्हारे लाल नेत्र तुम्हारी चोरी प्रकट कर रहे हैं। साथ ही राधा यह भी कहती है कि वह कृष्ण की प्रकृति, गुण, शील सबसे भलीभाँति परिचित है।

विद्यापति के कृष्ण धृष्ठ भी हैं। जिस नायक के अपराध प्रत्यक्ष होने पर भी झूठ बोलकर अपने को सच्चा साबित करने का ढोंग रचाता हो वह धृष्ठ नायक होता है। पदावली में कृष्ण भी अपनी धृष्टता करने से बाज नहीं आते। रात भर किसी पर नारी के साथ बीताकर लौटने पर जब राधा को उनकी चोरी की बात पता चलती है तो दोषी होने पर भी कृष्ण झूठ बोलकर अपने को सच्चा सिद्ध करते हैं-

सुन सुन सुंदरि कर अबधान। बिन अपराध कहसि काहे आन।।

पुजलहुँ पसुपति जामिनि जागि। गमन बिलंब भेल तेहि लागि।। (बेनीपुरी 2011:104)

प्रस्तुत पद में कृष्ण की चोरी पकड़े जाने पर वह राधा को सारी रात देवाधिदेव महादेव की पूजा करने की तथा जागरण करने की झूठी बात बताता है। इसलिए उन्हें घर लौटने में देर हुई और राधा उन पर बिना अपराध के दोष लगा रही है।

पदावली के एक पद में 'कत परि माधब साधब मान।' (बेनीपुरी 2011:115) कहकर कृष्ण के मानी रूप का भी चित्रण कवि ने किया है, जो मनभावन है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि पदावली में कवि विद्यापति ने कृष्ण को धीरललित, चतुर, उपपति, शठ, धृष्ठ और मानी के रूप में चित्रित कर संयोग शृंगार का अनुपम चित्र खींचा है।

पदावली में शृंगार का आलम्बन नायिका राधा है। विद्यापति की राधा अनिद्य सुंदरी है, जिसे कवि ने अपरूप, अभिरामा आदि रूपों में दर्शाया है। वयःसंधि और सद्यस्नाता राधा के सौंदर्य का वर्णन जो विद्यापति ने पदावली में किया है वह अतुल्य है। नायिका भेद की दृष्टि से अध्ययन करने पर विद्यापति की राधा क्रमशः मुग्धा, अज्ञातयौवना, अभिसारिका, खंडिता, मानिनी, परकीया और विरहिणी रूप में चित्रित हुई है।

शैशव से यौवन में प्रवेश करनेवाली वयःसंधि कालीन राधा का जो अनुपम चित्र कवि विद्यापति प्रस्तुत करते हैं, वही मुग्धा नायिका राधा है। मुग्धा राधा का शरीर ही नहीं उसके मानस पर अंकित चित्र को भी कवि ने दिखाया है। शैशव और यौवन दोनों के द्वंद्वात्मक परिस्थिति में विचित्र आचरण करनेवाली राधा सबको मोहनेवाली मुग्धा है- 'सैसव जौवन दुहु मिलि गेल, स्रवनक पथ दुहु लोचन लेल' (बेनीपुरी 2011:36)। पदावली की राधा मुग्धा तो है ही, वह अज्ञातयौवना भी है। यौवन को प्राप्त होकर भी जो उससे अन्जान रहती है वही अज्ञातयौवना नायिका कहलाती है। राधा भी यौवन आने पर उससे अनजान है, इसलिए वह अलग आचरण करती है-

कबहुँ बाँधए कच कबहुँ बिथार, कबहुँ झाँपए अंग कबहुँ उघार।।

थीर नयान अथिर किछु भेल, उरज उदय-थल लालिम देल।।

चपल चरन, चित चंचल भान, जागल मनसिज मुदित नयान।।

विद्यापति कह करु अवधान, बाला अंग लागल पंचबान।। (बेनीपुरी 2011:37)

अज्ञात यौवना सुंदरी राधा के शरीर में शैशव और यौवन दोनों आधिपत्य रखना चाहते हैं। इसलिए राधा के मन में संघर्ष उत्पन्न होता है। इसी कारण कभी यौवन का पक्ष भारी रहता है और कभी शैशव का पक्ष। जिस समय जिसका पक्ष प्रबल होता है राधा उसी के अनुकूल आचरण करती है। कभी वह केशों को यत्न पूर्वक सँवारकर बाँधती है और कभी बेणी खोलकर केशों को बिखरा देती है। कभी शैशव की सरलता एवं भोलेपन के कारण वक्षस्थल खुला, अनावृत छोड़ देती है, परंतु फिर लज्जा वश उसे ढक लेती है। नेत्र जो पहले स्थिर थे, अब चंचल हो गये हैं। अज्ञातयौवना राधा में काम तो जग गया है, किंतु अभी काम भावना का पूर्णतः संचार नहीं हुआ है। अंत में कवि दूती द्वारा कृष्ण को धैर्य रखने को कहते हैं कि वह उस परम सुंदरी राधा जो अज्ञातयौवना मुग्धा है, उससे भेंट अवश्य कराएंगे।

पदावली में अभिसारिका राधा का चित्र भी अनुपम है। जो नायिका अपने प्रेमी से मिलने स्वयं संकेत स्थान पर जाती है वह अभिसारिका नायिका कहलाती है। अभिसारिका नायिका के तीन प्रकार किए गए हैं- दिवाभिसारिका (दिन में अभिसार करनेवाली), कृष्णाभिसारिका (अंधेरी रात में अभिसार करनेवाली) और शुक्लाभिसारिका (चांदनी रात में अभिसार करनेवाली)। विद्यापति की राधा ये तीनों अभिसारिका के अंतर्गत आती है। विद्यापति की पदावली में दूती नायिका को शुक्लाभिसार के लिए प्रेरित करती है। शुक्लाभिसारिका का एक पद यहाँ द्रष्टव्य है-

आज पुनिम तिथि जानि मएँ अइलिहिँ, उचित तोहर अभिसार।

देह-जोति ससि-किरन समाइति, के विभिनाबए पार।। (बेनीपुरी 2011:97)

विद्यापति ने पदावली में परकीया के रूप में राधा को भी चित्रित किया है-

रयनि समापलि फूलल सरोज। भमि भमि भमरी भमरा खोज।।

दीप मंद रुचि अंबर रात। जुगुतहि जानल भे परात।।

अबहु तेजह पहु मोहि न सोहाए। पुनु दरसन् होत मदन दोहाए।।

नागर राख नारि मन-रंग। हठ कएलें पहु हो रस-भंग।।

ततबे करिअ जत फाबए चोति। पर धन लए नहि रहिअ अगोरि।। (बेनीपुरी 2011:80)

प्रस्तुत पद में कृष्ण परकीया राधा के साथ रात बीता चुके हैं। अब रात्रि समाप्त हो चुकी है, कमल खिल उठे हैं और भ्रमरी घूम-घूम कर अपने भ्रमर को जो कमलिनी के पराग-कोष में बंद था खोज रही है। दीपक की कांति मंद हो गई है और सूर्योदय समीप होने के कारण आकाश रक्त वर्ण हो उठा है। अर्थात् प्रातःकाल हो गया है। अब तो राधा को छोड़ दीजिए, पुनः वह आपसे मिलेंगी। कवि कहते हैं- हे नागर कृष्ण प्रेमिका का आदर और प्रेम की सदैव रक्षा की जायँ, नहीं तो हठ करने से रस भंग होने की संभावना रहती है और चोरी केवल उतनी ही उचित है जितनी दूसरों की दृष्टि में अलक्ष्य रहे। अतः पर पुरुष रस लेने के पश्चात पर नारी को घेरे नहीं फिरता।

अपने प्रेमी या पति द्वारा उपेक्षित कर किसी अन्य स्त्री के साथ प्रणय सम्बंध को जानकर जो नायिका आक्रोश प्रकट करती है, वह खण्डिता कहलाती है। विद्यापति की राधा भी खण्डिता के रूप में चित्रित हुई है। वह भी सच्चाई जान कर कृष्ण को क्रोधित स्वर में उसी स्त्री के पास जाने को कहती है जिससे वह मिलकर आये हैं- 'चल चल कान्ह बोलह जनु आन। परखत चाहि अधिक अनुमान' (बेनीपुरी 2011:103)।

पदावली में मान धारण करने के बाद मानिनी राधा की तो कहना ही क्या, एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है-

मानिनि अब उचित नहि मान।

एखुनक रंग एहन सन् लागए, जागल पए पँचबान।।

जूड़ि रयनि चकमक करु चाँदनी, एहन समय नहि आन।। (बेनीपुरी 2011:107)

प्रस्तुत पद में सखी राधा से कहती है-हे सुंदरी अब मान करना उचित नहीं है। इस समय का वातावरण ऐसा प्रतीत होता है, मानो कामदेव सोकर जाग उठे हैं। शीतल रात्रि है, चंद्रमा झकाझक चमक रहे है। ऐसा समय फिर नहीं आयेंगा। अतः कृष्ण से मिलकर इस अवसर का पूर्ण उपभोग करो।

इसी प्रकार संयोग की अवस्थाओं के अंतर्गत विद्यापति ने राधा को मुग्धा, अज्ञातयौवना, अभिसारिका, परकीया, खण्डिता और मानिनी रूप में चित्रित किया है, जो पाठकों के हृदय में अमित छाप रखती है। विरहिणी राधा का चित्रण कर कवि ने पदावली में और भी भावात्मक गंगा की लहर बहा दी है।

5.2.1.2. पदावली में चित्रित वियोग श्रृंगारः

हिन्दी काव्य परम्परा में वियोग वर्णन कवियों का शृंगार रहा है। वियोग वर्णन में उत्कृष्ट लेखनी चलानेवाले कवियों में विद्यापति अन्यतम हैं। रससिद्ध कवि विद्यापति भावुक हृदय के अधिकारी थे। उनके भावुक हृदय का परिस्फुटन विशेषकर पदावली के विरह के पदों में देखने को मिलता है। पदावली में चित्रित विरह वर्णन अत्यंत मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी है। संयोग में जहाँ प्रेमी नायक-नायिका की बर्हिमुख भावनाओं की प्रबलता रहती है, वहीं वियोग में नायक-नायिका के परस्पर दूर रहने से अंतर्मुख भावनाओं की बहुलता रहती है। विद्यापति के संयोग शृंगार के चित्रों में स्थूलता का आरोप एवं वासना की गंध मिलने की बात कही जाती है। किंतु उनके वियोग शृंगार के पद उन्हें अत्यधिक विलासिता के दोष से बचाने में बहुत हद तक सफल रहे हैं। क्योंकि पदावली में चित्रित वियोग वर्णन के अनेक चित्र पार्थिवता से ऊपर उठ गए हैं।

काव्य शास्त्रीय परम्परानुसार वियोग शृंगार के-पूर्वराग, मान, प्रवास और करुण ये चार भेदों या स्थितियों का उल्लेख मिलता है। पूर्वराग में परस्पर प्रेमी-प्रेमिका में मिलन की उत्कंठा मात्र रहती है। मान

में भी वास्तविक दूरी से अधिक परस्पर हृदय की दूरी बनी रहती है। अतः दोनों में विरह का उत्कृष्ट रूप उजागर नहीं हो पाता। पदावली में मान के अनेक पद विद्यापति ने रचे हैं। प्रवास में ही प्रिय से दूर होने पर वियोग की सभी दशाओं का चित्रण मुख्य रूप से प्रतिफलित होता है। अतः प्रवास ही वियोग के सभी भेदों में प्रमुख होता है। प्रेमी-प्रेमिका दोनों में से एक की मृत्यु होने पर दूसरे का दुःख ही करुण है। पदावली में कवि विद्यापति ने विरह के दस दशाओं-अभिलाषा, चिंता, स्मृति, गुणकथन, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता और मरण का अनुपम चित्रण किया है।

पदावली में वियोग का आरंभ तब होता है, जब राधा को छोड़ कर कृष्ण मथुरा जाते हैं। जिस नंदकिशोर मधुसूदन का प्रेम ही राधा का सब कुछ है, उससे बिछड़ने की बात से ही राधा घबड़ा जाती है-

सखि हे बाँलम जितब बिदेसे।
हम कुलकामिनि कहइते अनुचित, तोहहुँ दे हुनि उपदेसे।।
ई न बिदेसक बेलि। (बेनीपुरी 2011:130)

पदावली के विरह वर्णन में राधा मूक-साधिका है, वह चुपचाप ही विरह का दर्द सहन करती है। विरह का संदेश और आत्मनिवेदन के अतिरिक्त सखी ही उसके विरह दशा का वर्णन करती है। लाख प्रयत्न करने पर भी जब कृष्ण मथुरा चले जाते हैं, तब राधा विरह में विलाप करती हुई बार-बार कृष्ण को स्मरण करके चिंतित हो उठती है-

मधुपुर मोहन गेल रे, मोरा बिहरत छाती।
गोपी सकल बिसरलन्हि रे, जत छलि अहिबाती।।
सूतलि छलहुँ अपन घर रे, गेलहुँ सपनाई।
करसए छुटल परसमनि रे, कओन लेल अपनाई।।
कत कहबों कत सुमिरबों रे, हमे मरिअ गरानि।
आनक घन सएँ धनबंति रे, कुबजा भेलि रानि।। (बेनीपुरी 2011:131)

कृष्ण के विरह में राधा की छाती फटी जा रही है। वह सखी से कहती है, कि उसे यह सोचकर और अधिक दुख होता है कि मोहन की कृपा दृष्टि के कारण सभी ब्रज की गोपियाँ सोभाग्यशाली बनी हुई थीं, किंतु अब सबको भुला दिया है। एक दिन स्वप्न में राधा ने देखा कि उसके हाथ से पारसमणि छूटकर गिर पड़ी है और कोई दूसरा उसे उठाकर ले गया है। तब सखी राधा को कहती है अपने दुर्भाग्य के विषय में कितना कहेगी और कितना सोचेगी। भाग्य की विचित्रता यह है कि दूसरे के धन से धनवान बनी कुब्जा आज दासी से रानी बनी हुई है। अर्थात् राधा का मोहन अब राधा से बिछड़ कर दूसरे का हो गए हैं। फिर भी राधा कृष्ण से मिलने की अभिलाषा को बराबर अपने मन में सजीव रखती है और कह उठती है-

मन करि तहाँ उड़ि जाइअ जहाँ हरि पाइल रे।।
पेम परसमनि जानि, आनि उर लाइअ रे।। (बेनीपुरी 2011:133)

अर्थात् जिस स्थान पर हरि मिले वहीं राधा उड़कर जाना चाहती है और उनको पारसमणि समझकर हृदय से लगा लेना चाहती है।

विद्यापति ने विरह वर्णन के दौरान राधा के द्वारा प्रियतम कृष्ण के गुणों का गान भी किया है-

कहओ पिसुन सत अवगुण सजनी, तनि सम मोहि नहि आन।
कतन जतन कए मेटिअ सजनी, मेटए न रेखपखान।। (बेनीपुरी 2011:134)

यहाँ राधा सखी से कहती है कि दुष्ट जन भले ही कृष्ण के सैकड़ों अवगुणों का वर्णन उससे करें, किंतु उसके लिए कृष्ण का समतुल्य अन्य कोई नहीं है। राधा के मनमंदिर में कृष्ण पत्थर की लकीर के समान अंकित हो गए हैं। जिस प्रकार अनेक यत्न करने पर भी पत्थर पर अंकित रेखा नहीं मिटती, उसी प्रकार अब राधा के हृदय पर अंकित प्रेम भी अमिट है।

विरह में उद्वेग की अवस्था बड़ी दयनीय होती है। विरहिणी राधा प्रियतम कृष्ण की प्रतीक्षा में है। किंतु वे नहीं आए, तब राधा की जो दशा होती है वह अत्यंत हृदयद्रावक होती है-

सजनी के कहब आओब मधाई।

बिरह-पयोधि पार किअ पाओब, मोर मन नहि पतिआई।।

एखन तखन करि दिवस गमाओल, दिवस-दिवस करि मासा।।

मास-मास करि बरस गमाओल, छाड़लि जीवन आसा।। (बेनीपुरी 2011:138)

यहाँ राधा सखी से कहती है कि कौन बता सकता है कि माधव कब आएँगे? इस विरह रूपी समुद्र को वह जीते जी पार नहीं कर पाएगी, इसका उसे विश्वास नहीं रहा। राधा को लगता है कि उसका विरह कभी ख़त्म नहीं होगा। एक-एक क्षण गिनकर विरह में राधा ने जीवन व्यतीत किया फिर दिनों को गिनकर महीना और महीनों को गिनकर वर्ष व्यतीत किया। अब तो राधा अपने जीवन की आशा भी त्याग चुकी है। विरह में व्याकुल राधा का उद्वेग यहाँ चित्रित हुआ है, जो मर्मस्पर्शी है।

पदावली में विरहिणी राधा कृष्ण को स्मरण कर प्रेमविभोर हो जाती है। प्रेमविभोर होकर राधा उन्माद अवस्था को प्राप्त करती है, जिसमें वह ख़ुद को ही माधव समझने लगती है। प्रेम की पराकाष्ठा तो तब चित्रित होती है, जब प्रेम में तल्लीन राधा कृष्ण बनकर राधा-राधा चिल्लाने लगती है। अर्थात् उन्माद तीव्र होने पर वह प्रलाप करने लगती है। पुनः जब होश में आती है तो कृष्ण के लिए व्याकुल हो उठती है-

अनुखन माधब माधब सुमरइते, सुंदरि भेलि मधाई।

ओ निज भाव सुभाबहि बिसरल, अपनेहि गुन लुबुधाई।।

माधब, अपरुब तोहर सिनेह।

अपनेहि बिरहें अपन तनु जरजर, जिबइते भेल संदेह।।

भोरहि सहचरि कातर दिठि हेरु, छल-छल लोचन पानि।

अनुखन राधा-राधा रटइत, आधा आधा बानि।।

राधा सँग जब पुन तहि माधब. माधब सँग जब राधा।

दारुन प्रेम तबहि नहि टूटत, बाढ़त बिरहक बाधा।। (बेनीपुरी 2011:144)

विरह की अन्यतम दशा है व्याधि। पदावली में भी अत्यंत विरह दग्ध होने के कारण राधा की अवस्था दयनीय हो जाती है। पदावली के विरह वर्णन में कई पदों में राधा की दयनीय दैहिक अवस्था का चित्रण अनेक पदों में मिलता हैं। जैसे- 'कोमल अरुन कमल कुम्हिलाएल, देखि गएँ अइलिहिँ जानी', इसके अलावा भी 'धरनि धरि धनि जतनहि बइसइ, पुनहि उठए न पारा' पदों में व्याधि का चित्रण मिलता है। वियोग व्यथा की व्याधि इतनी बढ़ती है कि राधा काठ की मूर्ति बन जाती है। यह स्थिति जड़ता की होती है। जड़ता की स्थिति के कारण वह मूर्च्छित हो जाती है। पदावली में विरहिणी राधा की जड़ता का भी चित्रण उपलब्ध है, उदाहरणस्वरूप-

अकामिक मंदिर भेलि बहार। चहुँदिस सुनलक भमर-झंकार।।

मुरुछि खसलि महि न रहलि थीर, न चेतए चिकुर न चेतए चीर।।

केओ सखि बेनी धुन केओ धुरि झार। केओ चानन अरगजहि सँभार।।

केओ बोल मंत्र कान पर जोलि। केओ कोकिल खेद डाकनि बोलि।। (बेनीपुरी 2011:141)

प्रस्तुत पद में सखी कहती है कि अकस्मात ही आज राधा अपने भवन से बाहर आई और चारों ओर पुष्पों पर मँडराते भ्रमरों के दलों को देखकर राधा मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़ी। उस समय उसे न तो अपने वस्त्रों का ध्यान था और न अपने केशों को सँभालने की सुधि ही थी। उसकी दयनीय दशा देख कोई सखी उसके केशों को सँवारने लगी, कोई सखी उसके शरीर पर लगी धूल झारने लगी तथा कोई सखी राधा को चेतनावस्था में लाने के लिए चंदन सुँघाने लगी और कोई कस्तुरी का लेप लगाकर शीतोपचार का प्रबंध करने लगी। अन्य कोई सखी कानों के निकट आकर मंत्र जाप करने लगी और कोई कोयल की कूक को ही इस अवस्था का कारण समझ कर भयानक आवाज़ निकालने लगी। विरह के कारण हुई राधा के इस दयनीय दशा के चित्रण में जड़ता संचारी भाव की सुंदर व्यंजना हुई है।

विरह की चरमावस्था मरण होती है। पदावली में चित्रित विरह वर्णन में विरहिणी नायिका राधा प्रियतम कृष्ण के विरह में इतनी दग्ध होती है कि उसकी मृत्यु समीप दिखलाई देने लगती है, जिसका वर्णन सखी द्वारा किया गया है-

माधब, कत परबोधब राधा।

हा हरि, हा हरि कहितहि बेरि-बेरि, अब जिब करब समाधा।। (बेनीपुरी 2011:144)

इस प्रकार महाकवि विद्यापति ने विरह की दस दशाओं का चित्रण पदावली में चित्रित किया है। राधा के साथ ही कृष्ण के विरहदग्ध हृदय का चित्रण भी कवि ने किया है। इसमें कवि ने प्रेमी और प्रेमिका उभय पक्षों के विरह वर्णन को सम्पूर्ण किया है। कृष्ण के विरहावस्था का एक चित्र यहाँ प्रस्तुत है-

रामा हे, से किअ बिसरल जाई।

कर धरि माथुर अनुमति मँगइत, ततहि परल मुरछाई।।

किछु गदगद सरे लहु-लहु आखरे, कान्ह कहल बर रामा।

कठिन कलेवर तहिं-चलि आओल, चित्त रहल ओहि ठामा।।

तनि बिनु राति दिबस नहि भाबए, ताहि रहल मन लागी।

आन रमनि सँग राज सम्पद हमे, आछिअ जइसे बिरागी।। (बेनीपुरी 2011:145)

यहाँ सखी राधा से कृष्ण के विरह का वर्णन कर कह रही है-हे राधे, उस दृश्य को कैसे विस्मरण करूँ, हाथ जोड़कर मथुरापति कृष्ण तुम्हारे दर्शन की भिक्षा माँग रहे थे। कृष्ण भावावेश में इतने विह्वल हो गए कि उसी क्षण मूर्च्छित होकर वहीं गिर पड़े। मूर्च्छितावस्था में गदगद स्वर से बोले कि वे तुम्हें किस प्रकार विस्मरण कर सकते हैं? सखी वहाँ उसी अवस्था में कृष्ण को छोड़ कर तो आई, पर वह राधा से कहती है कि तेरे बिना माधव को कुछ भी नहीं सुहाता, दिन-रात सदैव अनमने से रहते हैं। केवल तुममें ही समस्त मनःशक्ति लगी रहती है। मथुरा में अन्य रमणी के संग क्रीड़ा तथा राज-सम्पत्ति उपभोग को त्याग कर विरागी की तरह रह रहे हैं। इस प्रकार कृष्ण भी राधा के विरह में जल रहे हैं।

पदावली में विरह को और सजीव रूप में चित्रित करने के लिए कवि विद्यापति ने बारहमासा का वर्णन भी किया है। विरहिणी राधा के विरह की तीव्रता को प्रकृति का सौंदर्य अधिक उद्दीप्त

करता है। राधा के दुख की सीमा नहीं होती जब भाद्र पद के जल भरे मेघ चारों ओर मंडराते फिर रहे हैं, चारों ओर उछलते हुए मेघ निरंतर गरज रहे होते हैं। उनसे बरसे हुए जल से समस्त पृथ्वी भर उठी है। कैसी सुहावनी ऋतु है। परंतु प्रियतम के बिना विरहिणी का मन और भवन सूना-सूना है-

सखि है हमर दुखक नहि ओर।

ई भर बादर माह भादर, सून मंदिर मोर।।

झंपि घन गरजति संतत, भुवन भरि बरसंतिया।

कंत पाहुन काम दारुन, सघन खर सर हंतिया।। (बेनीपुरी 2011:136)

फिर असाढ़, सावन, आसिन आदि आ-आकर अपने परिवर्तित प्राकृतिक छटाओं से विरहिणी को और अधिक सताता है, दुख देता है। वर्षा के बाद जब प्रकृति हरी-भरी, उल्लासमयी होती है, किंतु विरहिणी राधा का वियोग और असहणीय बन जाती है-

फुटल कुसुम नव कुंज कुटिर बन, कोकिल पंजम गाबे रे।

मलयानिल हिमशिखर सिधारल, पिआ निज देश ने आबे रे।। (बेनीपुरी 2011:136)

अर्थात् राधा को केवल प्रियतम माधव के दर्शन से ही सुख मिलेगा अन्यथा नहीं। इस प्रकार पदावली में बारहमासा वर्णन के माध्यम से विरह का चित्रण और भी प्रभावोत्पादक बना है।

5.2.2. कीर्तन-घोषा में चित्रित श्रृंगारः

एकशरण हरि-नाम धर्म प्रचार के लक्ष्य से रचित कीर्तन-घोषा मूलतः भक्तिप्रधान ग्रंथ है, जिसे महापुरुष शंकरदेव ने नाम-प्रसंग मूलक ग्रंथ के रूप में रचना की थी। विशिष्ट साहित्यिक प्रतिभा के गुणों के अधिकारी शंकरदेव की कीर्तन-घोषा भक्ति रस से सराबोर है, साथ ही इसमें अन्य रसों का भी निदर्शन देखा

जाता है। कीर्तन-घोषा के भिन्न खण्डों में वर्णित कथाओं में हर्ष-विषाद, क्रोध-क्षमा, प्रेम-विरह आदि भावों का संगम हुआ है। कीर्तन-घोषा में अल्प ही सही किंतु आदिरस शृंगार का चित्रण भी हमें कुछ खण्डों में मिलता है। अध्ययन के दौरान जिन खण्डों में शृंगार रस के संयोग और वियोग पक्षों का चित्रण मिलता है, क्रमशः वे खण्ड हैं- 'गजेन्द्रोपाख्यान', 'हरमोहन', 'रासक्रीड़ा', 'कुजीर बांछापूरण' और 'गोपी-उद्धव संवाद'। प्रस्तुत खण्डों में चित्रित शृंगार के उभय पक्षों का अध्ययन विवेचन करने से पूर्व यहाँ एक बात उल्लेख्य है कि शंकरदेव ने कीर्तन-घोषा में शृंगार का चित्रण केवल भक्ति मार्ग को सबल बनाने के लिए किया था। उन्होंने कीर्तन-घोषा के 'रास-क्रीड़ा' खण्ड में स्वयं इस बात की पुष्टि की है-

शृंगार-रसे यार आछे रति।
आके शुनि हौक निर्मल मति।।
भकतर पदे आपुनि हरि।
क्रीड़िला रंगे नरदेहा धरि।। (गोस्वामी 1989:236)

प्रस्तुत पद में शंकरदेव कहते हैं कि शृंगार में जिनकी रति अर्थात् मन रमता है, वे इस कथा को सुनकर मन को निर्मल करें। भक्तों द्वारा गाये जानेवाले इन पदों में हे हरि आप ने मनुष्य रूप लेकर क्रीड़ा की है। अर्थात् यहाँ स्पष्ट है कि शंकरदेव ने भक्ति के साधन के रूप में ही शृंगार का चित्रण किया।

5.2.2.1. कीर्तन-घोषा में चित्रित संयोग श्रृंगारः

कीर्तन-घोषा में चार खण्डों में संयोग शृंगार का चित्रण हुआ है- 'गजेन्द्रोपाख्यान', 'हरमोहन', 'रासक्रीड़ा' और 'कुजीर बांछापूरण' में।

'गजेद्रोपाख्यान' कीर्तन-घोषा का एक लघु खण्ड है, जिसमें तीन कीर्तन है। प्रस्तुत खण्ड के प्रथम कीर्तन में त्रिकुट पर्वत के अपरूप शोभा का वर्णन, दूसरे कीर्तन में मदमस्त गजेन्द्र (इंद्र का हाथी) का केलि

और तीसरे कीर्तन में ग्राह (मगरमछ) और गजेन्द्र के बीच युद्ध तथा भगवान विष्णु द्वारा गजेन्द्र उद्धार का वर्णन है। प्रचण्ड शक्तिशाली तथा मदमस्त गजेन्द्र त्रिकुट पर्वत के वन में हथिनियों के साथ संभोग करते हुए विचरण करता है। एक पद देखिए-

चरंते फुरंते क्रीड़ंते याइ।

रहिला गजेंद्र भागर पाइ।। (गोस्वामी 1989:117)

अर्थात् चलते फिरते गजेन्द्र उन हथिनियों के साथ संभोग करते जाता है और थकान होने पर वह रुक जाता है।

थकान और सूर्य की तेज धुप से बचने के लिए गजेन्द्र हथिनियों और बच्चों सहित जलाशय में जाता है, जहाँ कामातुर गजेन्द्र के जलक्रीड़ा का एक चित्र यहाँ प्रस्तुत है-

अगाध जल आतिशय जुर।

गजेन्द्रे घने घने पारे बुर।।

हस्तिनी समे करे जलक्रीड़ा।

खण्डिल समस्ते रोद्रर पीड़ा।। (गोस्वामी 1989:117/118)

अर्थात् जलाशय के गहरे और ठण्डे पानी में गजेन्द्र बार-बार डुबकियाँ लगाता है, फिर हथिनियों के साथ जलक्रीड़ा करके अपने समस्त पीड़ा को दूर करता है।

विषय सुखत भैलेक भोल।

नेदेखे मृत्यु आसि पाइल कोल।। (गोस्वामी 1989:118)

अर्थात् विषय सुख में गजेन्द्र इतना वेसुध होता है कि समीप आते मृत्यु को भी वह देख नहीं पाता।

इस प्रकार काम भावना जो शृंगार का अन्यतम तत्व है, 'गजेन्द्रोपाख्यान' में अनुपम रूप में चित्रित किया गया है।

'हरमोहन' कीर्तन-घोषा का एक अनुपम खण्ड है, जिसमें दस कीर्तन हैं। प्रस्तुत खण्ड में वर्णित आख्यान के अनुसार भोलेनाथ शंकर माता पार्वती के साथ भगवान विष्णु के मोहिनी रूप के अभिलाषी होकर विष्णुलोक जाते हैं, तत्पश्चात वहाँ अपनी माया पर विजय पाने के अहंकार को प्रकट करते हैं। फिर विष्णु भगवान के मोहिनी रूप के वशीभूत होकर शंकर भगवान किस प्रकार ज्ञानशून्य, विवेकहीन, मतिहीन अवस्था को प्राप्त करते हैं इसीका वर्णन यहाँ है। भगवान विष्णु के मोहिनी रूप का तथा भगवान शंकर के कामातुर रूप के वर्णन में संयोग शृंगार का उत्कृष्ट चित्रण हुआ है। एक उदाहरण यहाँ निम्नलिखित है-

हस्तिनीक जेन मत्त हस्ती याय खेदि।

पलांत सुंदरी शंकरक लाग नेदि।।

प्राण जाय शंकरर काम उतपाते।

महावेगे खोपात धरिला बाम हाते।। (गोस्वामी 1989:134)

अर्थात् जिस प्रकार काम में उन्मत्त हाथी हथिनी के पीछे दौड़ता है, उसी प्रकार भोलेनाथ शंकर भी सुंदरी (मोहिनी) के पीछे भागते हैं; परंतु सुंदरी उनके हाथ नहीं आती। तब काम पीड़ा से दग्ध शंकर भगवान तीव्र गति से दौड़कर सुंदरी की जुड़ा को ही अपने बाये हाथ से पकड़ लेते हैं।

देवों के देव महादेव के उन्मत्त काम पीड़ा का और एक चित्र यहाँ प्रस्तुत है-

कामिनी हरिल चित्त कामे भैला भोल।

नुशुनंत शंकरे ऋषिर मात-बोल।।

रमणीर पाछे पाछे फुरंत लवरि।

गाव देखाई सुंदरी पलांत भरि-भरि।। (गोस्वामी 1989:139)

अर्थात् सुंदरी कामिनी के कामबाण से दग्ध भोलेनाथ अपना सब कुछ भुला बैठे, जिसके कारण ऋषियों के कहा-सुना भी सुन न सके। वे केवल उस सुंदरी के पीछे भागते रहे और वह सुंदरी अपनी अंगों की भंगिमा दिखाकर भागती रही। अर्थात् वह भोलेनाथ शंकर को और कामासक्त करती रही।

इसी प्रकार प्रस्तुत खण्ड में शंकर भगवान की कामसक्त दुर्गति की अवस्थाओं का चित्रण शंकरदेव ने किया है। कामदेव की पंचबाणों से दग्ध विष्णु भगवान के विश्व मोहिनी अवतार को हासिल करने की ललक में महादेव वृक्षों को ही सुंदरी समझकर आलिंगन करते हैं, चुमने लगते हैं। किसी का ध्यान नहीं रहता है, उलंग वेश में ही चारों तरफ़ मोहिनी के पीछे उसे पकड़ने के लिए भागते रहते हैं।

कीर्तन-घोषा में चित्रित संयोग शृंगार के अन्यतम खण्डों में से एक है- 'रासक्रीड़ा'। इसमें कुल अठारह कीर्तन हैं। कृष्ण के साथ कई गोपियों द्वारा किया गया नृत्य ही रासक्रीड़ा है। प्रस्तुत खण्ड में कृष्णभक्त गोपियों संग श्रीकृष्ण का शरदकालीन पूर्णिमा रात्रि कामकेलि का वर्णन, एकनिष्ठ भक्तिभाव और आत्मा-परामात्मा का मिलन का वर्णन है। शरदकालीन रात्रि अवतारी पुरुष कृष्ण ने अपने विश्व मोहन रूप धारण कर ब्रज की गोपियों संग रासक्रीड़ा की। कृष्ण की मधुर वंशी की सुललित ध्वनि सुन सभी गोपियाँ व्याकुल होकर अपने गृह कर्म, पति, पुत्र सबको वैसे ही छोड़ कर कृष्ण के पास पहुँचीं। कृष्ण की लोकनिंदा, धर्म निंदा, कुल मर्यादा के भय दिखाने पर भी गोपियाँ केवल कृष्ण सान्निध्य लाभ को ही पाने के लिए दृढ़ रहीं। इस प्रकार गोपियों की एकनिष्ठ प्रेम भक्ति भाव से संतुष्ट होकर कृष्ण ने उनकी मनोरथ पूर्ण करते हुए रासक्रीड़ा की-

गोपीर शुनि आकुल बाणी।
भैलंत सदय सारंगपाणि।।
हासिया बोलंत एड़ियो ताप।
गोपीक क्रीड़िला जगत बाप।। (गोस्वामी 1989:205)

अर्थात् गोपियों के आकुल स्वर सुनकर कृष्ण ने सदय होकर उनसे हँसकर कहा कि परिताप करना छोड़ दे और जगत के पिता ईश्वर कृष्ण स्वंय गोपियों के साथ केलि करने लगे।

'रासक्रीड़ा' खण्ड में चित्रित संयोग शृंगार का एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है-

धरिया कारो कन्ठे बाहु मेलि।

करिला अनेक अनंग-केलि।।

आनंदे गोपीर बढ़ाया काम।

रमिला गोपीनाथ अविश्राम।। (गोस्वामी 1989:207)

अर्थात् कृष्ण गोपियों संग रासक्रीड़ा करते समय किसी गोपिका के गले को अपने बाहों से आलिंगन कर अनेक केलि करते हैं। इस प्रकार गोपियों की काम वासना को और बढ़ाकर अविराम रूप से उनको रमने लगे। अर्थात् कृष्ण सभी गोपियों के साथ काम-क्रीड़ा करने लगे।

इस प्रकार प्रस्तुत खण्ड में गोपियों के साथ कृष्ण के रासलीला में अनेक स्थलों में संयोग के मनोमुग्धकारी चित्रण हुआ है।

कीर्तन-घोषा में उपर्युक्त तीन खण्डों के अलावा 'कुँजीर बांछापूरण' खण्ड में भी संयोग शृंगार का चित्रण हुआ है। केवल एक कीर्तन से रचित यह एक लघु खण्ड है। भागवत के दशम स्कंध के आधार पर रचित इस खण्ड में कुब्जा (सौरंध्री) के सेवा भाव से प्रसन्न होकर कृपालु श्रीकृष्ण ने किसतरह उसका मनोरथ पूर्ण किया उसीका वर्णन है। कुब्जा से शाप मुक्त बनी सौरंध्री की मनोकामना को पूर्ण करते हुए कृष्ण उद्धव के साथ कंस बध करने के बाद उसके गृह में रुकते हैं। जहाँ दासियाँ कृष्ण और उद्धव की सेवा करती हैं। तत्पश्चात कृष्ण सौरंध्री की इच्छा का मान रखते हुए उसकी काम भाव को पूर्ण कर संभोग करते हैं। 'कुजीर बांछापूरण' में चित्रित संभोग का एक चित्र देखिए-

मनुष्य चेष्टाक देखाइ कृष्ण पाछे

शय्यात भैला प्रवेश।

सैरिंध्रीउ आनि दिव्य अलंकार

पिंधिल बस्त्र बिशेष।।

मधुपीया गंधे चंदने कुंकुमे

भूषित करिला लास।

कर्पुर तांबुले भुंजि अनुरागे

चापिल कृष्णर पाश।। (गोस्वामी 1989:300)

अर्थात् साधारण मानविक आचरण दिखाते हुए कृष्ण सौरंध्री की शय्या में प्रवेश करते हैं। सौरंध्री भी दिव्य अंलकार तथा वस्त्र लाकर पहनती है। भ्रमर को लुभानेवाली सुगंधित चंदन, कुंकुम आदि से शोभित होकर कृष्ण के समक्ष लास्यमयी रूप में कर्पूर और सुपारी लेकर अनुराग से कृष्ण के पास आती है। यहाँ चंदन, कुंकुम आदि उद्दीपन विभाव है जो रति भाव को जगाने में सहायक हुआ है।

इस प्रकार 'गजेंद्रोपाख्यान', 'हरमोहन', 'रासक्रीड़ा' और 'कुजीर बांछापूरण' खण्डों में संयोग शृंगार का चित्रण हुआ है। किंतु यहाँ यह स्पष्ट करना ज़रूरी होगा कि प्रस्तुत चारों खण्डों में शृंगार शंकरदेव का कदापि काम्य नहीं था, एकमात्र भक्ति ही उनकी प्रधानता रही है। विषय-वासना में विभोर गजेंद्र को जब जलाशय में ग्राह पकड़ लेता है, परस्पर युद्ध के पश्चात अपनी मृत्यु को समीप देख गजेंद्र जब माधव को उद्धार के लिए करुण भाव से पुकारता है, तब कृपालु माधव अपने भक्त को आकर बचाते हैं-

शुण्डे मेह्लाई पद्मगोट उपरक तुलि।

गजेंद्रे शरण लैल त्राहि हरि बुलि।।

शुनि शीघ्रे चड़ि हरि गरुरड़ स्कंधे।

भकतक राखिवाक आसिला प्रबंधे।। (गोस्वामी 1989:120)

अर्थात् अपने सूड़ में कमल उपर को लेकर गजेंद्र हरि को प्राणों की रक्षा के लिए त्राहि-त्राहि कर पुकारने लगा। अपने शरणागत भक्त की कातर पुकार सुन हरि शीघ्र ही गरुड़ के पीठ पर बैठकर अपने भक्त को बचाने आए।

'हरमोहन' खण्ड में भी माया पर विजय केवल भक्ति से ही सम्भव दिखाया है। विष्णु भगवान के मोहिनी रूप को देखकर पागल और उन्मत्त होनेवाले भोलेनाथ शंकर को भी अंत में ईश्वर की लीला का ज्ञान होता है और उनके अंहकार का पतन होता है-

बिष्णुर आगत मइ परम अज्ञानी।
जिनिलो मायाक बुलिलोहो गर्ब-बाणी।।
इसे अंहकारे करे हृदयत ताप।
हरि हरि स्मरणे खण्डोक इटो पाप।।80 (गोस्वामी 1989:141)

अर्थात् परिताप करते हुए शिवजी कहते हैं कि विष्णु के समक्ष मैं परम अज्ञानी हूँ, माया पर विजय पाने की गर्वित बात मैंने कही। इसी अहंकार के कारण हृदय मलिन था, इस पाप का खण्डन तो हरि स्मरण से ही सम्भव है।

इसी प्रकार 'रासक्रीड़ा' प्रकृतार्थ में भगवंत की एक प्रकार लीला है। इसमें भक्ति-धर्म की श्रेष्ठता को प्रतिपादित किया गया है। ब्रज वधुओं का कृष्ण प्रेम उनकी भक्ति भावना की ही अभिव्यक्ति है। रासलीला किसी साधारण मनुष्य के लिए संभव नहीं है, यह तो पूर्णकाम ईश्वर कृष्ण के लिए ही सम्भव है। ब्रज की गोपियों के लिए कृष्ण साधारण मानव नहीं, उनकी दृष्टि में कृष्ण मायाधीश, योगेश्वर तथा परमेश्वर हैं। इसीलिए वे कुल-स्त्री की मर्यादा, सम्मान, सुख सभी का त्याग कर भक्तवत्सल हरि के शरणागत हुई हैं-

भजियो आमाक मिलोक भाग।

नकरा नाथ भकतक त्याग।।

कहिला जितो कुलस्त्रीर कर्म।

तोमाते थाकक सिसव धर्म।।

जगतर बंधु आतमा तुमि।

समस्त धर्मर आपुनि भूमि।।

तुमि आत्मा हेन जानि सम्प्रति।

तोमातेसे करे भकते रति।। 23/24 (गोस्वामी 1989:203)

यहाँ गोपियाँ कृष्ण से निवेदन करती हैं कि अब उन्हें उनकी सेवा भाव का भाग मिलना चाहिए। उनके लिए कुल स्त्री का धर्म अब असार है, केवल कृष्ण रति ही उनका धर्म है। जगतबंधु, परामात्मा तथा समस्त धर्म कृष्ण ही हैं। इसलिए गोपियों ने जब कृष्ण के स्वरूप को जान लिया है, तो वे एकनिष्ठ भाव से कृष्ण की प्रेम भक्ति में निमज्जित होती हैं।

डॉ. नवीन चंद्र शर्मा ने शंकरदेव की रासक्रीड़ा के सम्बंध में अपना मत व्यक्त करते हुए कहा है-

रासक्रीड़ात यि क्रीड़ार परिस्फुरण घटिछे सेइ क्रीड़ा कामभावर परा सम्पूर्ण बाहिरत। जगत-प्रपंच भगवंतर लीला माथोन- लीलैव केवलम। गतिके रासक्रीड़ा लीला-नट भगवान कृष्णर नृत्यलीला माथोन। रासक्रीड़ा एने लीला, यि लीलार संयोगत भक्तर मनत सांसारिक कामना-वासना, माया-ममता एको नाथाके, थाके माथोन सप्रेम भक्ति, यि भक्तर बलत जीवइ ब्रह्मर लगत एकीभूत हबलै प्रयास करे। साधारण आरु अभकतजने नायक-नायिकार प्रणयपूर्ण लीला-माला दर्शन आरु श्रवण करार फलत लाहे लाहे तेउँलोकर जांतव प्रवृत्तिबोर परिशोधित है ऐश्वरिक भाववृत्तिलै रुपांतरित हब। (शर्मा 1988:161)

अर्थात् रासक्रीड़ा में जिस क्रीड़ा को दिखाया गया है, वह पूर्णतः काम भाव से रहित है। जगत के योगेश्वर भगवंत की लीला है-लीलैव केवलम। इसलिए रासक्रीड़ा लीला-नट भगवान कृष्ण की नृत्य लीला मात्र है। यह इस प्रकार की लीला है जिसके संयोग से भक्त के मन में सांसारिक काम-वासना, माया-मोह

कुछ नहीं रहता, रहता है केवल सप्रेम भक्ति, जिस भक्ति के बल पर जीव ब्रह्म के साथ विलीन होने का प्रयत्न करता है। साधारण और नास्तिक जनों द्वारा नायक-नायिका के प्रणयपूर्ण लीला-माला दर्शन और श्रवण करने पर धीरे-धीरे उनके पाशविक प्रवृत्तियों का परिशोधन होकर ऐश्वरिक भाव में परिवर्तन होगा।

इस प्रकार 'कुजीर बांछापूरण' खण्ड में भी कुब्जा की अल्प सेवा भक्ति ही से संतुष्ट होकर ही कृष्ण ने सौरंध्री की इच्छा की पूर्ति की-

चंदन-अर्पण बिने कुबुजार
आन किछु पुण्य नाइ।
एतेकते हेन देखियो परम
प्रसाद पाइलेक ताइ।। (गोस्वामी 1989:302)

अर्थात् चंदन अर्पण के अतिरिक्त कुब्जा ने अन्य कोई पुण्य नहीं किया। किंतु इसी निष्ठा के कारण कृष्ण से उसे मनोवांछित फल मिला।

5.2.2.1.1. सौंदर्य चित्रणः

कीर्तन-घोषा में शंकरदेव ने शृंगार पक्ष का चित्रण करते हुए सौंदर्य तथा रूप वर्णन भी किया है। शृंगार के संयोग वर्णन में रूप वर्णन का अत्यधिक महत्त्व रहता है। कीर्तन-घोषा भागवत पर आधारित तो है पर इसमें शंकरदेव की मौलिक संरचना अनुपम रही है। कीर्तन-घोषा में केवल पाँच खण्डों में ही शृंगार का चित्रण हुआ है, किंतु उसमें चित्रित सौंदर्य चित्रण किसी भी कमी को खलने नहीं देती। 'हरमोहन खण्ड' में चित्रित मोहिनी अवतार के अपरूप तथा चमत्कारिक नख-शिख सौंदर्य का एक चित्र यहाँ प्रस्तुत है, जिसके कारण देवाधिदेव शंकर कामज्वाला में पागल हो गए थे-

कोटिलक्ष्मी सम नोहे कटाक्षे त्रैलोक्य मोहे

भंटा खेरि खेले दुयो हाते।।

तप्त सुवर्णर सम   ज्वले देहा निरुपम

ललित-बलित हात पाव।

चक्षु कमलर पासि   मुखे मनोहर हासि

सघने दरशे काम-भाव।।   (गोस्वामी 1989:129/130)

अर्थात् उस अपरूप मोहिनी के समक्ष करोड़ों लक्ष्मियों की भी तुलना नहीं है, जिसके कटाक्ष सबको मोहते हैं वह अपने दोनों हाथों से भंटा अर्थात् गोलाकार गोटियाँ लेकर खेल रही है। उसका शरीर उज्ज्वल सोने की तरह चमक रहा है और हाथ-पैर की शोभा भी अनुपम है। आँखें कमल पंखुरियों की भांति हैं, उस पर उसकी मुख की मनोहर हँसी तीव्र रूप से काम भाव को जगाती है।

मोहिनी विष्णु भगवान का ही अवतारी रूप होने के कारण उसके सौंदर्य में दिव्यता का अंकन शंकरदेव ने किया है। मोहिनी रूपी सुंदरी अपने कटाक्ष तथा अंग-प्रत्यंग की भंगिमा से ऐसे सौंदर्य की छिटकारी मारती है कि महादेव जैसे महायोगी कामुक बनने पर विवश हो जाते हैं-

मुख चंद्रसम शोभे   पद्मर सुरभि लोभे

बेढ़ि मधुकरे करे रोल।

शरीरर लासबेश   नेत्रर कटाक्ष ठेस

देखि शंभु आति भैला भोल।।33 (गोस्वामी 1989:131)

अर्थात् उसका मुख चंद्रमा सदृश शौभायमान है। शरीर कमल पुष्प की सुगंध से सुगंधित है मानो भ्रमर (प्रेमिक) घेरे आवाज़ दे रहा हो। उसकी देह की कमनीयता, हाव-भाव तथा नेत्र की कटाक्ष देख भोलेनाथ सब भुला बैठे हैं।

शंकरदेव ने सौंदर्य चित्रण में नारी सुलभ गुणों का अंकन करते हुए लज्जा युक्त हाव-भाव को भी दिखाया है-

भंटा खेरि खेलांते हातर परा उरि।

गैल गुटि पाछे कतो दूरक उफरि।।

ताक खेदि जांते कन्या बेग धरि धाइ।

कटिर बसन् बायु निला उरुवाइ।।

भैला तनु उदास बेकट गुप्त अंग।

लाजे आंठु साबटि करंत अंग-भंग।। (गोस्वामी 1989:132/133)

अर्थात् मोहिनी रूपी सुंदरी के हाथों से खेलते समय जब गोलाकार खेलने की गोटियाँ दूर गिर पड़ी तब उसे लेने के लिए सुंदरी भागी। भागते समय उस सुंदरी का वस्त्र हवा ने ले जाती है और उसके गुप्तांग दिख पड़ते हैं। तब वह लज्जावश बैठकर अपने अंग छिपाने का भाव प्रकट करने लगी।

शंकरदेव ने ब्रह्म रूपी कृष्ण के परम मधुर रूप-सौंदर्य का अनुपम चित्रण 'रासक्रीड़ा' में चित्रित किया है, उदाहरणस्वरूप-

हासो हासो करे आति बदन-कमल।

श्याम तनु पीत वस्त्रे देखिते उज्वल।।

चिकिमिकि करे अंलकारर दीपिति।

गलत पद्म माला देखंते तृपिति।।

देखि रूप मदनरो मोहन साक्षात।

उठिल आनंद सवे गोपी असंख्यात।। (गोस्वामी 1989:223/224)

अर्थात् मधुर मुरारि कृष्ण के कमल सदृश मुख पर हास्य विराजमान है और उनका श्यामल शरीर पीत वस्त्रों के साथ उज्वलित है। देह पर धारण किये गये अंलकार दीप्ती प्रदान कर रहे हैं एवं गले में पद्म

माला को देखकर ही मन तृप्त होता है। कामदेव को भी हराने वाली मोहन कृष्ण को साक्षात देखकर असंख्य गोपियाँ आनंद विभोर हो उठीं।

विलक्षण प्रतिभा के धनी शंकरदेव ने प्रकृति के अपरूप सौंदर्य को उद्दीपन बनाकर कीर्तन-घोषा में शृंगार का चित्रण किया है। प्राकृतिक सौंदर्य वर्णन करते समय शंकरदेव ने असम की प्राकृतिक छटाओं का उल्लेख कर अपनी मौलिकता का परिचय दिया है। असम के पेड़-पौधे, फल-फूल, पक्षी आदि के नाम 'कीर्तन-घोषा' में विद्यमान है। 'गजेंद्रोपाख्यान' में चित्रित 'आम जाम लेबु जरा जामीर खाजुरि' (गोस्वामी 1989:115) पद में प्रकृति का अनुपम चित्रण हुआ है।

काम भाव को उद्दीप्त करनेवाली अपरूप सौंदर्यमय परिवेश का एक चित्र 'कुजीर बांछापूरण' में देखिए-

मलया चंदन   सुगंधित घ्राण

मालती चंपा शिरीष।

अगरु धूपर   धुम्रे आमोदित

बासय दिश-बिदिश।।

चौपाशे पुतला लेखिछे बेरत

करंत आछे सूरत।

याक देखि होवे   कामी पुरुषर

कामे चित्त उन्मत्त।।   (गोस्वामी 1989:299)

अर्थात् सौरंध्री के गृह में चंदन, मालती, चम्पा और शिरीष के सुगंध की मलय तथा अगरु अगरबत्ती से चारों दिशाएँ अमोदित हो रही हैं। गृह के दीवारों पर जो चित्र अंकित हैं तथा जो सुरों का प्रवाह चल रहा

है उससे कामुक पुरुष का कामभाव और तीव्र होता है। यहाँ चंदन, मालती, चम्पा, शिरीष, अगरबत्ती तथा चित्र सभी उद्दीपन विभाव का कार्य कर रहे हैं।

इस प्रकार 'कीर्तन-घोषा' में संयोग शृंगार चित्रण के अंतर्गत नारी के रूप में मोहिनी जो कृष्ण का ही अवतार है तथा पुरुष रूप में कृष्ण के अपरूप सौंदर्य का वर्णन किया गया है। रूप चित्रण में नख-शिख सौंदर्य, स्त्री सुलभ हाव-भाव, अंग-प्रत्यंग वर्णन के साथ दिव्यता का भी समावेश हुआ है। प्राकृतिक उद्दीपन का भी अन्यतम रूप में शंकरदेव ने चित्रण किया है।

महापुरुष शंकरदेव ने किसी काव्य शास्त्रीय परम्परानुसार 'कीर्तन-घोषा' के नायक और नायिका का चित्रण नहीं किया। प्रस्तुत कृति की रचना तो केवल लोकसमाज में वैष्णव भक्ति का स्रोत बहाने के लिए की थी। इसमें कृष्ण चरित्र का अंकन ऐश्वरिक तथा मानवी रूप में किया गया है। कृष्ण ही मुल रूप में भक्ति का आलंबन है, इस प्रकार से कृष्ण कीर्तन-घोषा के अप्रतिद्वंद्वी नायक तथा लीलेश्वर हैं। किंतु जहाँ तक नायिका की बात है कीर्तन-घोषा में नायिका नहीं है। विद्यापति की पदावली में राधा-कृष्ण ही नायक-नायिका के आलम्बन रहे हैं, किंतु कीर्तन-घोषा में राधा का उल्लेख है ही नहीं। शंकरदेव ने भक्तसमाज में 'कीर्तन-घोषा' को किसी भी विरूप प्रतिक्रिया से दूर रखने के उद्देश्य से ही एकमात्र ब्रह्म रूपी कृष्ण के चरित्र को ही अंकन किया। यदि शंकरदेव द्वारा रचित अन्य कृति की बात की जाय तो रुक्मिणी-हरण काव्य तथा नाटक में रुक्मिणी कृष्ण की नायिका के रूप में ठहरती है। अतः 'कीर्तन-घोषा' में चित्रित नायक कृष्ण और प्रसंगवश नायिका के रूप में रुक्मिणी आई है।

शंकरदेव की 'कीर्तन-घोषा' में वर्णन का मुख्य विषय नायक कृष्ण ही हैं। कीर्तन-घोषा के खण्डों में आख्यानों का वर्णन कृष्ण लीला से ही हुआ है। एक तरफ वे सनातन शाश्वत शिशु हैं, जिनकी क्रियाएँ सामान्य मानव शिशु की भांति है और साथ ही उनकी लीलाएँ अलौकिक, दूसरी तरफ़ वे पुरोषोत्तम परमब्रह्म 'कृष्णंतु भगवान स्वयंम' हैं। जैसा कि शंकरदेव ने 'कीर्तन-घोषा' के प्रथम खण्ड चतुर्विंशति अवतार

में कृष्ण के स्वरूप को स्पष्ट कर दिया है- 'प्रथमे प्रणामो ब्रह्म-रुपी सनातन' (गोस्वामी 1989:1)। शंकरदेव के उपास्य देव तथा कीर्तन-घोषा के नायक कृष्ण मानव शरीरी हैं, जो गोकुल, वृंदावन, मथुरा, द्वारका आदि स्थानों में अपनी लीला प्रदर्शन कर नंद-यशोदा, गोप-गोपी आदि सभों आश्चर्यचकित तथा मंत्रमुग्ध करते हैं। मानवी और ऐश्वरिकता के कारण कृष्ण में दो प्रकार की चारित्रिक विशेषताओं का प्रतिफलन हुआ है।

कीर्तन-घोषा के 'शिशु-लीला' खण्ड में कृष्ण के शिशु-सुलभ बदमाशियों, नटखटपन का मनोरम चित्रण दृष्टिगोचर हौता है। शिशु कृष्ण की चातुरी से तंग आकर ग्वालिनें यशोदा के पास आती हैं। एक चित्र यहाँ प्रस्तुत है-

कि भैल तोमार इटो तनय दुर्जन।
कृष्णर निमित्ते आउर नरहे जीवन।।
गाइ नतु दोहंते दामुरि मेले गइ।
गृह पाश चुरि करि खांत दुग्ध दइ।। (गोस्वामी 1989:165)

अर्थात् ग्वालिनें यशोदा को कहती हैं कि यह किस दुष्ट को तुमने जन्म दिया है, जिसके कारण हमारा जीना कठिन हो गया है। वह हमारे बछड़ों को गाय दुहने से पूर्व ही खोल देता है, जिससे हम दूध नहीं निकाल पाती हैं और हमारी घरों में घुसकर दूध-दही चोरी करके खाता है।

इस प्रकार कितनी ही चतुराई से कृष्ण ने सामान्य शिशु का आचरण किया है। बड़े होने पर यही कृष्ण वृंदावन में गाय चराते हैं, यमुना किनारे तथा कदम्ब वृक्ष पर बैठकर बाँसुरी बजाते हैं, गोपियों के साथ नृत्य करते हैं, रासलीला करते हैं। वृंदावन के मनोरम परिवेश के बीच आनंद मन से बिहार करनेवाले कृष्ण के चरित्र में एक मानव शिशु का रूप प्रस्फुटित होता है। किंतु इसी मानवी रूप के पीछे जो पूर्ण ब्रह्म रूप है, उसे भी शंकरदेव ने जगह-जगह पर स्पष्ट किया है-

ब्रह्मायो नाजाने यार महिमा।
चारि बेदे कहि नपावे सीमा।।

हेन माधवक तनय पाईल।

यशोदा नंदे किनो तपसाइल।। (गोस्वामी 1989:170)

अर्थात् स्वयं ब्रह्माजी भी जिनकी महिमा नहीं जान पाए, चार वेदों में जिनकी सीमा का वर्णन नहीं हो सका, उसी को अपने पुत्र के रूप में नंद-यशोदा ने न जाने किस तपस्या के बल पर पाया।

कृष्णावतार लीला में ऐश्वरिक लीला-माधुर्य का अपूर्व समन्वय हुआ है। 'कीर्तन-घोषा' में कृष्ण दुष्टों को दण्ड देनेवाले, संत-साधुओं को उद्धार करनेवाले, सर्वशक्तिमान के रूप में चित्रित हुए हैं। पुतना-बध, अर्जुन-भंजन, अघासुर बध, बकासुर-बध, कंस बध, बलिछलन, गोवर्धन धारण, यशोदा द्वारा कृष्ण के मुख में विश्व-ब्रह्माण्ड दर्शन, नरसिंह अवतार, मोहिनी अवतार, कालि-दमन, नारद द्वारा कृष्ण के भिन्न रूप दर्शन आदि वर्णन द्वारा कृष्ण की वीरता तथा ऐश्वरिक महिमा का प्रकाशन हुआ है। कृष्ण रूप-वर्णन तथा उनकी ऐश्वरिक शक्ति का चित्रण करते हुए शंकरदेव ने कीर्तन-घोषा के एक पद में कहा है-

नमो गोप-रूपी मेघ-सम-श्याम-तनु।

गावे पीतबस्त्र हाते शिंगा बेत बेणु।।

कर्णत गुंजार थोका माथे मैरा-पाखि।

बन्य-पुष्प-माला पिंधि धेनु आछा धरि।।

एहि शरीरते आछे जतेक महिमा।

मनेउ करिते पारे कोने तार सीमा।।

आछोक परमब्रह्म स्वरूप तोमार।

ताक जानिबाक आछे शकति काहार।। (गोस्वामी 1989:183/184)

अर्थात् सामान्य ग्वाल रूपी कृष्ण का शरीर मेघ के समान श्यामल वर्ण का है, जो पीतवस्त्र धारण करते हैं और हाथ में शिंगा (मुँह से बजानेवाला वाद्य), बेंत (गाय चरानेवाला लाठी) तथा बेणु (वंशी) हैं।

कृष्ण ने कानों में गुंजा के गुच्छे, माथे पर मोर पंख, गले में वनमाला पहनकर हाथ में धेनु (धनुष) लिए हुए हैं। शंकरदेव कहते हैं कि इसी शरीर की महिमा के बारे में कोई स्मरण करके भी उसकी सीमा नहीं जान पाया। वास्तव में जो तुम्हारा परमब्रह्म स्वरूप है उसे जान पाने की शक्ति किसी में नहीं है।

कृष्ण रासलीला में बाँसुरी बजाकर गोपियों संग नृत्य-गीत करते हैं, जिसके कारण कृष्ण में धीरललित नायक के गुणों का समावेश हुआ है। किंतु शंकरदेव के द्वारा चित्रित कृष्ण को पूर्णकाम ब्रह्म रूप में स्थापित किया है। अतः कीर्तन-घोषा के नायक कृष्ण काव्यशास्त्रीय नायकों की सीमा से असीम तथा सभी गुणों से परे, परमब्रह्म परमेश्वर हैं।

कीर्तन-घोषा में नायिका का स्थान शंकरदेव ने रिक्त ही रखा है। प्रसंगवश देखा जाए तो शंकरदेव की रचनाओं में रुक्मिणी हरण काव्य और रुक्मिणी हरण नाट दोनों में ही नायिका है 'रुक्मिणी'। 'रुक्मिणी' एक आकर्षक एवं महत्त्वपूर्ण नारी पात्र है। वह कुण्डिन नगरी के राजा भीष्मक की राजकन्या तथा राजदुलारी है, जो अनिद्य सुंदरी है-

कि कहब रमनिक रूप प्रचुर।
बयनक देखि चाँद भेलि दूर।।
नयनक पेखि पाइ बड़ि लाज।
कयल झाम्प कमल जल माझ।।
बंदुलि अधिक अधर करु कांति।।
ओतिम मोतिम दसन्क पांति।।
सुबलित भुज जुग रतन मोलान।
उरु करिकर कटि डम्बरुक ठान।।
नव पल्लव रुचि पद जुग सोहे।
पेखिते सुरनर मुनि-मन मोहे।। (रायचौधुरी 2006:208/209)

अर्थात् उस रमणी (रुक्मिणी) की प्रचुर सुंदरता के बारे में क्या कहना, उसके मुख रूप-सौंदर्य को देखकर चंद्रमा भी दूर भाग जाता है। उसके नेत्रों की सुंदरता देख लज्जावश जल में खिली कमल पुष्प भी अपने में छिप जाता है। उसकी अधरों की शोभा बंदुलि लगाने से और अधिक बढ़ती है तथा दंत पंक्तियाँ मोति की तरह सुंदर हैं। रमणी की सुगठित भुजाएँ इतनी कमनीय हैं कि रत्न म्लान पड़ जाते हैं। जंघाओं के उपर स्थित नितंब डम्बरु सदृश है। वह सुंदरी जब-जब अपने पैर आगे बढ़ाती है, तो ऐसा प्रतीत होता है कि नव पल्लव अंकुरित हो गया है। ऐसी अपरूप सुंदरी को देख सुर-नर-मुनि सब मंत्रमुग्ध होते हैं।

अनुपम सुंदरी तथा सर्वगुणसम्पन्न राजकुमारी रुक्मिणी जब से भाट के मुख से कृष्ण की रूप-सौंदर्य-गरिमा की कथा सुनती है, तबसे कृष्ण को ही मन से अपना स्वामी मान लिया है। किंतु उसके भाई रुक्मवीर अपनी बहन का विवाह राजा शिशुपाल से कराना चाहता है। इसलिए रुक्मिणी द्वारका नरेश श्रीकृष्ण को संदेश भिजवाती है कि वे आकर उसका हरण करें, अन्यथा वह जीवित नहीं रहेगी। रुक्मिणी का संदेश पाकर कृष्ण उसे वेश बदलकर हरण करने जाते हैं। किंतु रुक्मवीर को इसका पता चलने पर कृष्ण के साथ युद्ध करता है। युद्ध में कृष्ण के हाथों अपने भाई की प्राणों पर संकट आते देख रुक्मिणी कृष्ण से अपने सहोदर भाई की प्राण-भिक्षा माँग कर विनती करने लगती है। कृष्ण भी रुक्मिणी के कारण सदय होकर रुक्मवीर को छोड़ देते हैं। अंत में कृष्ण और रुक्मिणी का विवाह सम्पन्न होता है।

5.2.2.2. कीर्तन-घोषा में चित्रित वियोग श्रृंगारः

कीर्तन-घोषा में शंकरदेव ने विरह का भी चित्रण किया है। कीर्तन-घोषा के 'गोपी-उद्धव संवाद' खण्ड में मूलतः विरहाकुल गोपियों के विरह का चित्रण हुआ है, साथ ही रास-क्रीड़ा खण्ड में भी कुछ क्षणों के लिए कृष्ण को न देख गोपियाँ विरहावस्था से गुजरती है। प्रस्तुत दोनों खण्डों में चित्रित विरह वर्णन को निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया गया हैः

श्रीमद्भागवत महापुराण के आधार पर रचित कीर्तन-घोषा का 'गोपी-उद्धव संवाद खण्ड' एक लघु खण्ड है। इसमें केवल एक ही कीर्तन है। प्रस्तुत खण्ड में कृष्ण के विरह में व्याकुल गोपियों को सांत्वना देने के

उद्देश्य से कृष्ण का सखा उद्धव को गोकुल नगरी भेजने, गोपियों संग उद्धव का वार्तालाप, कृष्ण का समाचार, गोपियों के कृष्ण-विरह में व्याकुलता और अंत में गोपियों को ईश्वर भजन कर मोक्ष प्राप्ति का उपाय बताने का वर्णन है। कृष्ण को स्मरण कर उनके गीत गाती हुई विरहिणी गोपियों के व्याकुल मन का एक चित्र देखिए-

गोपीगणो आति व्याकुल चित्त।
गावे उजागरे कृष्णर गीत।।
काहारो हरि बिना नाहि स्वस्त। (गोस्वामी 1989:294)

अर्थात् गोपियाँ कृष्ण को याद कर उसके विरह में अत्यंत व्याकुल हैं। कृष्ण के गीत गाकर ही वे रात गुजारती हैं अर्थात् वे रात भर नहीं सोतीं। कोई भी कृष्ण के बिना स्वस्थ नहीं है।

यहाँ गोपियों की अस्वस्थता व्याधि के अंतर्गत आती है। कृष्ण को देखने की अभिलाषा को व्यक्त कर गोपियाँ उद्धव से पूछती हैं-

आर कि आसिब नंदर पुर।
कैसानि देखिबो मुख प्रभुर।। (गोस्वामी 1989:297)

अर्थात् और कृष्ण कब आएँगे नंद के पुर यानी गोकुल। हम(गोपियाँ) उनके श्रीमुख का दर्शन कब कर पाएँगी।

अपने पति-पुत्र तथा विषय सुख को त्याग कर एकनिष्ठ प्रेम भाव से दिन-रात गोपियाँ केवल कृष्ण के नाम का गुण-गीत गाकर रोती बिलखती रहती हैं-

रात्रि दिने गावे हरि चरित्र।
तिनिउ लोकक करि पवित्र।।
बोलंत अनेक प्रबोध-बाक।
क्रंदन आवे एड़ा गोपिजाक।। (गोस्वामी 1989:296)

अर्थात् गोपियाँ विरह में रात-दिन हरि गीत गाकर तीनों लोकों को पवित्र करती हैं। तब उद्धव उन्हें प्रबोध देकर रोना त्यागने को समझाते हैं।

शंकरदेव ने प्रस्तुत खण्ड में ही कम शब्दों में ही विरह की जड़ अवस्था का चित्रण भी किया है-

कृष्णते सबे निमाईजिला मन।
काहारो गात नाहि चेतन।। (गोस्वामी 1989:296)

अर्थात् कृष्ण प्रेम में गोपियाँ इतनी निमज्जित हो जाती हैं कि किसी के शरीर में चेतना ही नहीं रहती।

इस प्रकार 'गोपी-उद्धव संवाद' में शंकरदेव ने गोपियों की विरह कातर अवस्था का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। किंतु इसमें गोपियों का विरह पूर्णतः प्रेम भक्ति से ओतप्रोत है, जिसमें विषय सुख की तनिक भी गंध नहीं मिलती।

कीर्तन-घोषा के 'रास-क्रीड़ा' खण्ड में संयोग के साथ वियोग का भी मार्मिक चित्रण मिलता है। 'रास-क्रीड़ा' खण्ड में जब कृष्ण को पाकर गोपियों के मन में अहं भावना का उदय होता है तब कृष्ण उनके दर्प का नाश करने हेतु अदृश्य हो गए और गोपियाँ कृष्ण को न पाकर विलाप करने लगती हैं-

गोपीर महा अहम्मव-भाव।
देखि नसहिला कृष्णर गाव।।
तासम्बार दर्प हरिवे मने।
भैला अंतर्द्धान तैते तेखने।।
कृष्णक नपाइ पाछे गोपीचय।
मिलिल संताप भैलंत भय।।
जेन यूथपक नेदेखि बने।
कांदे आर्तरावे हस्तिनीगणे।। (गोस्वामी 1989:207)

अर्थात् गोपियों की घोर अहंकार भाव को देख कृष्ण असहनीय हो उठे। उनका अहंकार तोड़ने के लिए कृष्ण अदृश्य हो गए। कृष्ण को न देख गोपियाँ उन्हें खोजने लगीं पर वे न मिले और गोपियाँ भयभीत होकर संताप करने लगीं। जैसे दल के प्रधान हाथी को न पाकर हथिनियाँ आर्तनाद करती हैं, वैसे ही गोपियाँ विरह में विलखने लगीं।

कृष्ण के विरह में व्यथित विरहिणी गोपियों की उन्माद अवस्था का मर्मस्पर्शी चित्रण यहाँ प्रस्तुत है-

हे आम जाम बेल बकुल।
नाहि उपकारी तोमार तुल।।
कृष्णर विरहे देखो आंधार।
कोवा कैक गैल प्राण आमार।। (गोस्वामी 1989:209)

अर्थात् कृष्ण को न पाकर गोपियाँ उपकारी आम, जामुन, बेल, बकुल आदि पेड़ों से कृष्ण का पता पूछती हैं, जो बोल ही नहीं सकते। वह इतनी विरहविह्वला हो गई हैं कि उन्हें चारों ओर अँधेरा ही दिखता है। फिर से वह उन वृक्षों से उनके प्राण-रूपी कृष्ण कहाँ गए पूछती हैं।

वियोग की चरम अवस्था मृत्यु होती है। 'रासक्रीड़ा' में शंकरदेव ने एक स्थान पर इसका स्पर्श करते हुए विरहिणी गोपियों की दयनीय अवस्था का चित्रण किया है। उदाहरणस्वरूप-

इहाकेसे सुमरंते प्रभु प्राण जाय।
तुमिसि आमार जीव प्राण समुदाय।।
एतेक बोलंत उपजिल प्रेम-भाव।
कांदे कृष्ण बुलिया पारय दीर्घ राव।।
गावे गीत कतो नयनर झरे नीर।
हा कृष्ण कृष्ण बुलि चित्त नोहे स्थिर।। (गोस्वामी 1989:223)

अर्थात् गोपियाँ अपने प्राण कृष्ण का नाम ले-लेकर उन्हें स्मरण कर रही हैं, प्रभु कृष्ण को याद कर अब उनके प्राण निकलने को हैं। कृष्ण को पुकारकर वे जोर-जोर से बिलखने लगती हैं। किसी गोपी का कृष्ण गीत गाते आँखों से अश्रुधारा बह रही है तथा इसतरह बार-बार कृष्ण को पुकारने के कारण वे अस्थिर हो गई हैं।

इस प्रकार 'गोपी-उद्धव संवाद' और 'रासक्रीड़ा' खण्डों में शंकरदेव ने विरह के सभी दशाओं के चित्रण के साथ विरहिणी गोपियों का अत्यन्त हृदयस्पर्शी चित्रण किया है।

5.3. तुलनात्मक विश्लेषणः

प्रस्तुत अध्याय में 'पदावली' और 'कीर्तन-घोषा' में चित्रित शृंगार के अध्ययन विवेचन करने के उपरांत कुछ साम्य एवं वैषम्य परिलक्षित होते हैं, जिन्हें निम्नलिखित रूपों में प्रस्तुत किए गए हैं-

5.3.1. साम्यः

शृंगार शिरोमणि कवि विद्यापति की पदावली और शंकरदेव की कीर्तन-घोषा -इन दोनों ही कृतियों में आदिरस शृंगार का चित्रण हुआ है। प्रस्तुत दोनों ही कृतियों में शृंगार के संयोग तथा वियोग उभय पक्षों का वर्णन कवियों ने किया है। पदावली और कीर्तन-घोषा में चित्रित शृंगार वर्णन में सौंदर्य चित्रण की समता भी परिलक्षित होती है। दोनों ही कृतियों में रचनाकारों ने संयोग वर्णन में रूप-सौंदर्य का अनुपम चित्रण किया है। रूप-सौंदर्य चित्रण में नख-शिख वर्णन, दैहिक सौंदर्य, नैन-कटाक्ष, अंग-प्रत्यंग तथा हाव-भाव का अनूठा चित्रण दोनों ही कृतियों में विद्यमान है। पदावली और कीर्तन-घोषा में शृंगार के आलम्बन रूप में नायक कृष्ण का ही चित्रण है, यह भी दोनों कृतियों में एकप्रकार से समता है। कृष्ण के अनुपम रूप-सौंदर्य का वर्णन दोनों ही कृतियों में चित्रित हुआ है। शृंगार के उद्दीपन रूप में प्रकृति ने उपमानों का प्रयोग प्रस्तुत दोनों ही कृतियों में द्रष्टव्य है, मौलिकता दोनों में विद्यमान है। रति या काम की प्रबल अवस्थाओं का चित्रण पदावली के राधा-कृष्ण के मिलन, अभिसार तथा विलास के पदों में जिस प्रकार चित्रित हुआ है, कीर्तन-घोषा के हरमोहन खण्ड

में भोलेनाथ शंकर और रासक्रीड़ा में गोपियों संग कृष्ण की केलि वर्णन में भी हुआ है। जहाँ तक वियोग वर्णन की बात है उभय कृतियों में रचयिताओं ने विशेषकर विरहिणियों का मर्मस्पर्शी वर्णन किया है। पदावली में विरहदग्धा राधा और कीर्तन-घोषा में विरहिणी गोपियाँ जो कृष्ण के विरह में व्याकुल, उदासीन रहती है, जिनकी दशा अत्यंत दयनीय है। पदावली और कीर्तन-घोषा में चित्रित विरह वर्णन में एक और समता मिलती है वह है-विरह की दस दशाओं का चित्रण। अभिलाषा, चिंता, उन्माद, जड़ता, मरण आदि दशाओं का चित्रण उभय कृतियों में देखने को मिलता है। पदावली में तो काव्यमर्मज्ञ कवि विद्यापति ने उत्कृष्ट रूप में दस-दशाओं का चित्रण किया ही है, कीर्तन-घोषा में भी विरह के प्रायः सभी दशाओं का वर्णन शंकरदेव ने किया है। इस प्रकार उभय रचनाओं में साम्य दृष्टिगोचर होता है।

5.3.2. वैषम्यः

पदावली और कीर्तन-घोषा में चित्रित शृंगार के अध्ययन विवेचन करने पर कुछ वैषम्य परिलक्षित हुए हैं। जैसे कि पदावली में शृंगार की बहुलता है क्योंकि राजकवि विद्यापति ने अपने राजदरबारी माहौल के अनुरूप ही शृंगार का उद्याम चित्रण प्रस्तुत किया है। जबकि कीर्तन-घोषा के कुछ खण्डों में ही शृंगार का चित्रण शंकरदेव ने किया है। महत्त्व की बात तो यह है कि शंकरदेव ने कीर्तन-घोषा में शृंगार का चित्रण भक्ति मार्ग में निमज्जित होने के लिए किया था। अर्थात् शंकरदेव ने जिन खण्डों में शृंगार का चित्रण किया है अंत में हरि भक्ति को ही मुक्ति का मार्ग बताया है। इसके अतिरिक्त पदावली में शृंगार के संयोग पक्ष में वयःसंधि, सद्यस्नाता तथा नारी देह की जो मांसल सौंदर्य का मनोवैज्ञानिक एवं सुक्ष्मातिसुक्ष्म चित्रण किया है, वह कीर्तन-घोषा में नहीं मिलता। पदावली मूलतः प्रेम का काव्य है, किंतु कीर्तन-घोषा मूलतः भक्ति काव्य। विद्यापति ने प्रेम के आलम्बन के रूप में कृष्ण-राधा को नायक-नायिका चुना, राधा और कृष्ण को कवि ने साधारण लौकिक रूप में ही चित्रण किया। अतः पदावली राधा-कृष्ण का अपूर्व प्रेम काव्य है। किंतु शंकरदेव ने अपनी भक्तिमूलक कृति कीर्तन-घोषा में केवल कृष्ण को भक्ति के आलम्बन रूप में पूर्णकाम ब्रह्म जो स्वयं

भगवान हैं, उनका चित्रण किया और राधा तथा अन्य किसी को भी नायिका को स्थान नहीं दिया। मानव अवतार में चित्रित कृष्ण को अलौकिक रूप में ही शंकरदेव ने चित्रण किया है। राधा तो शंकरदेव के लिए अन्य साधारण गोपियों से ही थी, कोई विशेष नहीं। उभय कृतियों में वियोग का अनुपम चित्रण तो मिलता है, परंतु दोनों में एक अंतर है कि-पदावली में बारहमासा का वर्णन हुआ है, जबकि कीर्तन-घोषा में बारहमासा का वर्णन नहीं है। इस प्रकार दोनों कृतियों में ऐसे वैषम्य दृष्टिगत होते हैं।

5.4. निष्कर्षः

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन विवेचन के उपरांत में कहा जा सकता है कि शृंगार के शिरोमणि कवि विद्यापति ने पदावली में प्रेम के आलम्बन रूप में राधा-कृष्ण के अपरूप शृंगार का वर्णन किया है। राधा और कृष्ण के लौकिक रूप का वर्णन कवि ने संयोग और वियोग दोनों पक्षों में किया है। संयोग वर्णन करना जैसे विद्यापति को अत्यंत प्रिय था। पदावली में चित्रित संयोग की अवस्थाओं का चित्रण कवि ने रमकर किया। राधा-कृष्ण के रूप-सौंदर्य वर्णन, मुग्धा, सद्यस्नाता वर्णन, परस्पर मिलन, मान, रति चित्रण आदि सभी में विद्यापति ने शृंगार का उद्याम चित्रण प्रस्तुत किया है। पदावली में नायक कृष्ण और नायिका राधा है, जिनका चित्रण कवि ने काव्य शास्त्रीय परम्परानुसार किया है। पदावली के नायक कृष्ण धीरललित, चतुर, शठ, मानी, उपपति तथा धृष्ठ रूप में चित्रित है तथा नायिका राधा मुग्धा, अज्ञातयौवना, अभिसारिका, मानिनी, विरहिणी आदि रूपों में चित्रित हुई है। मौलिक तथा नवीन उद्भावना शक्ति से विद्यापति ने पदावली में सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूप में शृंगार का चित्रण किया है। पदावली में चित्रित वियोग वर्णन में कवि ने भावात्मकता का परिचय दिया है। विरह की दस-दशाओं का चित्रण पदावली में अनुपम रूप में चित्रित हुआ है। साथ ही विद्यापति ने बारहमासा वर्णन कर पदावली में वर्णित वियोग को और अधिक उत्कृष्टता प्रदान की है। इस प्रकार श्रृंगारिकता के अमर कृति के रूप में पदावली एक उत्कृष्ट रचना है।

इसी प्रकार प्रस्तुत अध्ययन की दूसरी कृति कीर्तन-घोषा के रचयिता संत शंकरदेव हैं। जो मूलतः भक्तिप्रधान रचना है, किंतु इसके पाँच खण्डों में आदिरस शृंगार का चित्रण मिलता है। शृंगार शंकरदेव का

केवल एक माध्यम रहा है, जिसकी परिणति केवल हरि भक्ति ही है, जिसके बारे में शंकरदेव ने कीर्तन-घोषा में स्पष्ट कहा है। वैसे कीर्तन-घोषा में शंकरदेव ने शृंगार के उभय पक्षों का अनूठा चित्रण केवल पाँच खण्डों में कर अपनी रचनात्मक प्रतिभा का अदभूत परिचय दिया है। संयोग वर्णन में कवि शंकरदेव ने रूप-सौंदर्य चित्रण, काम-केलि का मनोमुग्धकारी चित्रण प्रस्तुत किया है। रासक्रीड़ा में गोपियों के संग कृष्ण की लीला और हरमोहन खण्ड में मोहिनी के भुवनमोहन विचित्र सौंदर्य को देख काम पीड़ा से उत्तेजित भोलेनाथ शंकर के वर्णन में रति स्थायी भाव का चित्रण कर शंकरदेव ने संयोगावस्था का अनुपम चित्र प्रस्तुत किया है। शंकरदेव ने कीर्तन-घोषा में भक्ति के मूल आलम्बन रूप कृष्ण को लिया, जो आलोच्य कृति के नायक हैं। किंतु शंकरदेव ने किसी काव्य शास्त्रीय परम्परानुसार नायक-नायिका का चित्रण नहीं किया। कीर्तन-घोषा में तो नायिका ही नहीं है। शंकरदेव के कृष्ण पूर्णकाम ब्रह्म के स्वरूप हैं जो मानवी शरीर में स्वयं भगवान हैं। श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन ही आलोच्य कृति में वर्णित है। प्रसंगवश रुक्मिणी-हरण काव्य और नाटक में चित्रित नायिका रुक्मिणी को कृष्ण की नायिका कह सकते हैं। कीर्तन-घोषा में विरह का भी चित्रण हुआ है। गोपी-उद्धव संवाद और रासक्रीड़ा खण्ड में विरहिणी गोपियों की मार्मिक स्थिति का चित्रण शंकरदेव ने चित्रित किया है। अंतर्स्पर्शी विरहिणी की प्रायः दस-दशाओं का चित्रों का वर्णन शंकरदेव ने किया है। इस प्रकार भक्ति के लिए शंकरदेव ने शृंगार के उभय पक्षों का चित्रण किया है।

इस प्रकार पदावली और कीर्तन-घोषा दोनों ही रचनाओं में आदिरस शृंगार के उभय पक्षों का चित्रण हुआ है। दोनों ही कृतियों में चित्रित शृंगार वर्णन में साम्य के साथ-साथ कुछ वैषम्य भी विद्यमान हैं। एक ओर जहाँ विद्यापति की पदावली में शृंगार का रमणीय चित्रण है, वहीं दूसरी ओर शंकरदेव की कीर्तन-घोषा में भी शृंगार के अनुपम चित्र प्रस्तुत हैं। अंतर इतना है कि पदावली का श्रृंगारिक वर्णन शृंगार के लिए ही विद्यापति ने किया था और कीर्तन-घोषा में चित्रित शृंगार का चित्रण भक्ति के लिए शंकरदेव ने किया था।

संदर्भ-ग्रंथसूची

असमीया

गोस्वामी, यतींद्रनाथ. *कीर्तन-घोषा आरु नाम-घोषा.* प्रथम. गुवाहाटीः ज्योति प्रकाशन. 1989.

शर्मा, नवीनचंद्र. *पूरणि असमीया साहित्यर सूवास.* प्रथम. गुवाहाटीः वाणी प्रकाशन. 1988

हिन्दी

दीक्षित, आनंदप्रकाश. *विद्यापति पदावली.* साहित्य प्रकाशन मंदिर. ग्वालियर.

बेनीपुरी, रामवृक्ष. *विद्यापति पदावली.* पंचम. इलाहाबादः लोकभारती प्रकाशन. 2011.

मिश्र, भगीरथ. *काव्यशास्त्र.* विश्वविद्यालय प्रकाशन. वाराणसी. पंचविंशति संस्करण. 2014

रायचौधुरी, भूपेन्द्र. *श्रीमंत शंकरदेवः व्यक्तित्व एवं कृतित्व.* प्रथम. गुवाहाटीः श्रीमंत शंकरदेव संघ. 2002

वर्मा, धीरेन्द्र(संपा). *सूरसागर सटीक सार.* साहित्य भवन प्रा. लिमिटेड जीरो रोड. इलाहाबाद. 2004

शर्मा, रमण कुमार. *साहित्यदर्पनकोश.* विद्यानिधि प्रकाशन. दिल्ली. 1996

शुक्ल, आचार्य रामचंद्र. *हिन्दी साहित्य का इतिहास.* अशोक प्रकाशन. दिल्ली. 2004

सिंह, ब्रजनारायण(संपा). *मध्ययुगीन काव्य.* नेशनल पाब्लिशिंग हाउस, दरियागंज. नई दिल्ली. 2004

वैबसाइट

आलेख, *शृंगार रस का अर्थ,* 9 January 2021 www.scottbuzz.org/2021/02/shringar-ka-arth.html

आलेख, *शृंगार रस की परिभाषा,* 28 September 2018 www.mycoaching.in/srangaar-ras-in-hindi.html